सुभाष

सुरेन्द्र कुमार

H
028.5 Su 77 S
Sa77S

INDIAN INSTITUTE OF
ADVANCED STUDY
LIBRARY SIMLA

सुभाष

सुरेन्द्रकुमार

सन्मार्ग प्रकाशन
16, यू० बी० बैंग्लो रोड, दिल्ली-110007

क्रम

वचपन	3
जन्म और शिक्षा	6
पीड़ितों की सहायता	7
सत्य की खोज	14
सुभाष बाबू कालेज में	18
सुभाष विदेश को	25
लन्दन में	28
भारतीय राजकुमार से भेंट	29
क्रान्तिकारी आन्दोलन में भाग लेना	31
बंगाल सरकार से टक्कर	33
बाढ़ पीड़ितों की सहायता	35
कलकत्ता कारपोरेशन के एक्जीक्यूटिव के रूप में	37
आर्डिनेन्स एक्ट के विरोध में समय-समय पर जेल यात्रा	37
विदेश में	44
अग्रगामी दल की स्थापना	0
पठान के भेष में छुपकर	2
जर्मन सरकार का सहयोग	4
अणुबम का प्रयोग	2
सुभाष का जापान को प्र...	63
सुभाष की वायुयान दुर्घटना द्वारा मृत्यु	64

Acc. No. 77932
Date 12/3/92

Library IIAS, Shimla
H 028.5 Su 77 S
00077932

©सन्मार्ग प्रकाशन

प्रकाशक : सन्मार्ग प्रकाशन
16 यू० बी० बंग्लो रोड, दिल्ली-110007
चौथा संस्करण 1986
मूल्य 10.00
मुद्रक : गामा प्रिंटिंग प्रेस
शाहदरा, दिल्ली-110032

बचपन

जब-जब हम भारतीय इतिहास पर दृष्टि डालते हैं तो हमें सुभाष बसु का नाम स्वर्ण अक्षरों में लिखा हुआ दिखाई देता है और भारतीय महापुरुषों में उनका प्रमुख स्थान है। हजारों नवयुवक और नव-युवतियों ने उनसे प्रेरणा ली। सुभाष बाबू ने अपने त्याग और अपनी देश-सेवा से समस्त देशवासियों पर अमिट छाप लगा दी।

सुभाष बाबू देश के अत्यन्त लोक-प्रिय नेता थे। देश-सेवा में ही आरम्भ से इनका मन लग गया था। देश-सेवा के आगे इनको सब कुछ तुच्छ-सा लगता था। देश-सेवा की वेदी पर इन्होंने अपने जीवन को न्यौछावर कर दिया। देश-सेवा के सामने इनको आई० सी० एस० का पद भी लालायित न कर सका। वह अपने ध्येय पर अडिग थे। मुश्किलों से बसु ने घबराना नहीं बल्कि टकराना सीखा था। इन्हें अपने जीवन में ऐसी शिक्षा मिली थी।

सुभाष का पहरावा अत्यन्त साधारण था। यह सब होते हुए भी इनके चेहरे पर एक अपूर्व ज्योति विद्यमान थी जो सुभाष की विलक्षण बुद्धि की ओर सभी का ध्यान आकर्षित कर लेती थी। इनसे जो एक बार मिल लेता वह इन्हीं का हो जाता था। भारत-वासियों की दुःख-भरी आवाज उनके कानों में हर

समय गूँजती रहती थी। वह भारत को स्वतन्त्र कराने का स्वप्न देखा करते थे। ऐसे ही सुभाष की हम तुम्हें कहानी सुनाते हैं--

बंगाल में कोदालिया नामक एक गाँव है। सुभाष के माता-पिता इसी गाँव के निवासी थे। पिता का नाम जानकीनाथ था। इनका बचपन और जवानी दोनों ही अपार कष्टों और बाधाओं से भरे हुए थे। इन्होंने यह सब होते हुए भी अपनी हिम्मत नहीं हारी और सभी दुःखों का साहसपूर्वक सामना किया। शीघ्र ही इनको अपनी मेहनत का फल भी मिला और वे एक सुप्रसिद्ध वकील बन गये। कटक सरकार ने इनके धैर्य और साहस को देख करके उन्हें अपना प्लीडर बना लिया। इस पद पर रह करके जानकी बाबू ने अपनी कर्त्तव्यपरायणता तथा योग्यता का पूरा परिचय दिया। कटक सरकार इनके काम से बहुत प्रसन्न हुई और पुरस्कार-स्वरूप इनको रायबहादुर की उपाधि से भी सम्मानित किया।

जानकीनाथ की शिक्षा-प्रसार में भी तीव्र रुचि थी। इन्होंने शिक्षा के प्रचार के लिए घोर परिश्रम किया और उसमें इन्हें सफलता भी प्राप्त हुई। इनकी सभी सन्तानें शिक्षित हैं, और प्रायः सभी ने उच्च शिक्षा के लिए विदेश यात्रा की है।

सुभाष बसु की माता प्रभावती भी धर्म-प्रिय तथा कर्त्तव्य-परायणा थीं। इन्होंने अपनी संतानों के लिए वह सब कुछ किया जो एक माता अपनी संतान

के लिए कर सकती थी। इन्होंने अपनी संतानों को निरन्तर आगे बढ़ते रहने की प्रेरणा दी।

जन्म तथा शिक्षा

सुभाष बाबू का जन्म कटक जिले में 22 जनवरी सन् 1897 में हुआ। बाल्यकाल से ही बसु को सभी चेष्टाएँ प्रगतिशील, साहसपूर्ण और साहसप्रिय थीं। पाँच वर्ष की आयु में सुभाष विद्यालय जाने लगे। 12 वर्ष तक वे कटक के एक यूरोपियन स्कूल में पढ़ते रहे।

स्कूल में इन्होंने पूरी लगन से पढ़ाई की।

सुभाष बाबू स्कूल में अपना समय व्यर्थ नहीं गँवाते थे। एकांत में रहना यह अधिक पसन्द करते थे। एकांत वातावरण में बैठे हुए ये बहुत कुछ सोचा करते और इनके मन में तरह-तरह के विचार उठते थे। अपने विचारों का निवारण करने का भी पूरा प्रयत्न करते थे।

स्कूल की पढ़ाई के समाप्त करने के पश्चात् 1909 में ये कटक के एक कालेजियेट स्कूल में प्रविष्ट हुए। श्री वेणीमाधवदास इनके प्रधानाध्यापक थे। सुभाष ने शीघ्र ही इनका मन जीत लिया और सुभाष से यह प्रसन्न भी रहते थे। इन्होंने सुभाष की प्रतिभा को भाँप लिया था। अच्छा शिक्षक अपने योग्य विद्यार्थी को पहचानने में भला भूल कैसे कर सकता था।

वेणीमाधवदास जी के चरित्र का इन पर अधिक प्रभाव पड़ा और सुभाष बाबू को एक नयी प्रेरणा मिलने लगी। सुभाष बाबू इनके भक्त बन गए।

सुभाष बाबू को समाचारपत्र पढ़ने का भी शौक था। वह वेणीप्रसाद जी के घर पर जा करके घंटों नए पुराने समाचार पत्र पढ़ते थे और संसार में घटने वाली घटनाओं से परिचित रहते थे।

पीड़ितों की सहायता

भाग्य की बात! बाबू वेणीप्रसाद जी का स्थानान्तरण हो गया। सुभाष बाबू को इससे बहुत दुःख पहुँचा। इससे सुभाष बाबू के जीवन में परिवर्तन होने लगा।

14 वर्ष की आयु में ही इन पर श्री रामकृष्ण परमहंस और स्वामी विवेकानन्द की शिक्षाओं का गहरा प्रभाव पड़ गया था। इनके मुख-मण्डल पर एक अद्भुत तेज झलकता था। कभी-कभी सुभाष बाबू रामकृष्ण परमहंस की कथामृत का पान करते और अपनी माता से धार्मिक कहानियाँ भी सुना करते थे। किन्तु इनके मुख्याध्यापक ने इनकी इच्छाओं को एक नया मोड़ दिया। अब यह गरीबों और दुःखी मनुष्यों की सेवा करने में भी अधिक रुचि लेने लगे थे। दुखियों की शोचनीय दशा को देख करके इनका हृदय पसीज उठता था। जहाँ तक इनसे सम्भव होता यह

उनकी भरसक सहायता भी किया करते थे।

उन्हीं दिनों पास के गाँव जाजपुर में हैजा फैला। दवा, सेवा और डाक्टरों का अभाव था। लोगों की दशा अत्यन्त शोचनीय हो गई। इस महामारी ने बहुतों को पृथ्वी पर से उठा लिया। हँसते-खेलते बच्चे काल का ग्रास बन गए।

सुभाष का हृदय यह सब देखकर रो उठा और उन्होंने उनकी सहायता करने का मन-ही-मन संकल्प किया। बालक घर आया परन्तु उसका मन आज उदास था। भोजन करने की भी उसकी इच्छा नहीं थी। उसकी माता ने भी आज उदासी का कारण पूछा परन्तु बालक चुप रहा। उससे कोई भी उत्तर देते न बन रहा था। उसका ध्यान तो कहीं और ही था। आँखों में असंख्य दुःखी नर-नारियों का चित्र अंकित हो गया था जो उसके आगे से हटने का नाम नहीं ले रहा है। वे उसे जैसे सहायता के लिए पुकार रहे हों। सुभाष को कोई रास्ता ही दिखाई नहीं दे रहा था। परन्तु बहुत देर सोचने के बाद उसे एक उपाय सूझ ही गया। यह उपाय ऐसा ही था जैसे अन्धे को लकड़ी का सहारा मिल जाता है।

सुभाष ने भोजन की थाली एक ओर कर दी और चुपचाप उठ गया। उसके पैर एक ओर बढ़ने लगे। उसे ऐसा लगा जैसे कोई अदृश्य शक्ति अनायास ही अपनी ओर खींच रही हो। उसके पग बढ़ते ही गए। बाबू वेणीमाधव का घर आ गया था। सुभाष बाबू

मकान में प्रविष्ट हो गए और वेणी बाबू के सामने जाकर खड़े हो गए।

वेणी बाबू अखबार पढ़ रहे थे। उनका ध्यान सुभाष की ओर आकृष्ट हो गया वे उसे असमय आया देखकर शंकित हो उठे।

प्यार से सुभाष को अपने पास बिठाया और आने का कारण भी पूछ ही लिया।

सुभाष बाबू ने जाजपुर में हैजा फैलने की बात से वेणी बाबू को अवगत कराया। वेणी बाबू से यह बात छुपी हुई नहीं थी। वे तो प्रतिदिन समाचारपत्रों में पढ़ ही लिया करते थे और आज भी उन्होंने वहाँ की चिन्ताजनक हालत का समाचार पढ़ा था।

वेणी बाबू ने पूछा, "अब तुम क्या करना चाहते हो ?"

सुभाष बाबू, "मैं जाजपुर जाना चाहता हूँ।"

वेणी बाबू को यह सुनकर बहुत ही आश्चर्य हुआ। उन्होंने आश्चर्यचकित होकर पूछा, "तुम वहाँ जाकर क्या करोगे ?"

सुभाष बाबू, "मैं वहाँ रह करके दुःखियों की सेवा करूँगा।"

वेणी बाबू ने उसे बहुत समझाया कि वह इस कार्य के लिए अभी अयोग्य है और ऐसी छूत की बीमारी में सेवा करना अत्यन्त ही कठिन है। उन्होंने बताया कि इस विचार से उनके जीवन को भी खतरा है।

सुभाष बाबू ने उनकी बातें बड़े ध्यान से सुनीं

परन्तु उन्होंने जाजपुर जाने के अपने निश्चय को अडिग बताया।

वेणी बाबू बालक के स्वभाव से परिचित थे अतः उन्होंने सुभाष बाबू के निश्चय के सामने अपने घुटने टेक दिए।

सुभाष बाबू को जाजपुर जाने की स्वीकृति मिल गई। वेणी बाबू सुभाष को अकेले नहीं जाने देना चाहते थे अतः उन्होंने भी सुभाष बाबू का साथ देने का निश्चय किया।

गुरु और शिष्य दोनों जाजपुर आ गए। दोनों ही दीन-दुःखियों की सेवा में जुट गए। जाजपुर की घटनाएँ उनके हृदय में खलबली मचा रही थीं। उनको यह जानकर बहुत दुःख हुआ कि सरकार यहाँ पर अपना कर्त्तव्य नहीं निभा रही है और यहीं पर सुभाष को विदेशी सरकार के जुल्मों का पता चला।

जाजपुर में सैकड़ों की संख्या में लोग कालग्रस्त हो रहे थे। सरकारी अधिकारियों को इसकी तनिक भी चिन्ता नहीं थी। अधिकारी-गण हाथ-पर-हाथ धरे बैठे थे। भारत की जनता मरने के लिए ही है, यह विदेशी सरकार के मस्तिष्क में घर कर चुका था तभी तो सरकारी अधिकारी इनकी तनिक भी चिन्ता नहीं करते थे। अपने प्रधानाध्यापक से भी सुभाष बाबू ने इस बारे में विचार-विनिमय किया। परन्तु संतोषजनक उत्तर न पा सके।

सुभाष के मन में विदेशी शासकों के बारे में सब

कुछ जानने की तीव्र इच्छा जागृत हो गई थी। वे वेणी बाबू से तरह-तरह के प्रश्न पूछते। वेणी बाबू सुभाष की हर समस्या का समाधान करने का पूरा प्रयत्न करते थे परन्तु सुभाष की उत्कण्ठा दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही थी।

वेणी बाबू को सुभाष के विचारों से प्रसन्नता हो रही थी। वेणी बाबू विदेशी शासकों के जुल्मों से परिचित थे, अतः कभी-कभी सुभाष की बातों से उनके मन में चिन्ता भी उत्पन्न हो जाती थी। अंग्रेज लोग भारत में दमन की नीति अपना रहे थे और कभी-कभी अपना उल्लू सीधा करने के लिए अन्याय का भी सहारा लेते थे।

इन सब बातों को सोच करके सुभाष बाबू को शांत रहने को कहते थे किन्तु इससे सुभाष के विचारों में कोई भी अन्तर नहीं आया। अब वे स्वतन्त्र रूप से जाजपुर की घटनाओं पर विचार करने लगे। उनके मस्तिष्क ने विदेशी दासता से छुटकारा पाने के लिए योजनाएँ बनानी आरम्भ कर दीं। उन्होंने अब अंग्रेजों को भारत से निकालने का दृढ़ संकल्प किया।

इस बारे में सुभाष बाबू एकांत में बैठ करके सोचा करते। सुभाष के हृदय में अब विद्रोह की आग सुलग उठी। सुभाष अब अपने मन की बात को अपने गुरु से अधिक दिन छिपाना नहीं चाहते थे। उन्होंने एक दिन बातों ही बातों में अपने गुरु से अपने दिल

की बात स्पष्ट शब्दों में कह दी ।

सुभाष ने गुरु को बताया कि वह अब विदेशी शासकों को भारत से निकालने के लिए हर सम्भव कुर्बानी देने को तैयार है वह अपना सब कुछ देश के लिए न्यौछावर कर देगा ।

गुरु ने सुभाष को समझाया कि यदि पत्थर से घड़ा टकरा जाए तो वह टूट जाता है । अतः तुम्हारा प्रयत्न व्यर्थ जाएगा । सुभाष ने वेणी बाबू को बताया कि प्रतिदिन पत्थर पर घड़ा रखने से पत्थर घिस जाता है अतः मैं अपना प्रयत्न जारी रखूँगा ।

वेणी बाबू ने उसको उपयुक्त समय आने तक इंतज़ार करने को कहा क्योंकि अभी सुभाष का समय पढ़ने का है अतः उसे व्यर्थ समय नहीं खोना चाहिए ।

सुभाष बाबू ने उनके इस तर्क को नहीं माना । उसका कहना था कि समय आगे बढ़ रहा है और समय कभी किसी का भी इंतजार नहीं करता है ।

बहुत कुछ समझाने पर सुभाष गुरु की इस बात पर राजी हो गया कि वह पढ़ने के साथ-साथ विदेशी सरकार को भारत से हटाने के लिए भी प्रयत्न शुरू रखेगा ।

अब जाजपुर की हालत में कुछ सुधार आ गया था । गुरु और शिष्य को सेवा-कार्य करते हुए लगभग दो मास हो गए थे अतः उन्होंने अब घर जाना ही उचित समझा ।

सुभाष बाबू जब घर पर आए तो उनके माता-

पिता खुशी से नाच उठे। उन्होंने सुभाष को प्यार किया और उसको कार्य की सफलता के लिए बधाई दी।

माँ को सुभाष ने जाजपुर में किए हुए अपने सेवा-कार्य के कुछ संस्मरण भी सुनाए।

माता प्रभावती उसके संस्मरणों को सुन कर गर्वित हो उठतीं और उन्हें अपने लाल पर नाज़ हो आता। नाज़ हो भी क्यों न जिसका ऐसा बेटा हो।

बातें करते-करते अधिक समय हो गया था अतः माता प्रभावती सुभाष को खाना खिलाने के लिए ले गईं।

सुभाष बाबू ने सन् 1913 में प्रवेशिका परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की। इस परीक्षा में उन्होंने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। अंग्रेजी इनको अच्छी आती थी। इनके परीक्षक ने भी कहा था कि सुभाष से अच्छी अंग्रेजी तो वह स्वयं भी नहीं जानता था। 1913 में सुभाष बाबू गाँव छोड़ करके कलकत्ता आ गए और वहीं प्रेसीडेंसी कालिज में प्रविष्ट हो गए और नहीं मन लगा करके पढ़ने लगे।

कालिज का वातावरण सुभाष को बड़ा विचित्र लगा। अमीर घरानों के लड़के बड़ी मौज उड़ाते थे और प्रतिदिन बहुत-सा पैसा और समय दोनों ही बरबाद करते थे। उनके ठाट-बाट भी निराले ही थे। यह सब देखकर सुभाष बहुत दुखी हुए। उनकी आँखों के सामने असख्य दरिद्र भारतवासियों का चित्र

आ जाता। वह इस तरह बेकार पैसा पानी को तरह बहाना अच्छा नहीं समझते थे, किन्तु वे कुछ भी कर नहीं सकते थे।

बाबू जानकीदास ने अपने बच्चों के रहने के लिए कलकत्ता में ही एक कोठी बना दी थी। परन्तु सुभाष कों आराम-तलब जिन्दगी व्यतीत करना अच्छा नहीं। लगता था। वह अपना अधिकांश समय पढ़ने में तथा भारत की वर्तमान हालत पर विचार-विनिमय करने में ही लगाते थे।

इन्हीं दिनों डाक्टर सुरेश बनर्जी ने मिर्जापुर स्ट्रोट मेडीकल मेटन में नवयुवकों की एक नई संस्था स्थापित की। इस आश्रम का ध्येय यह था कि उसमें ऐसे नवयुवक कार्यकर्ता तैयार हों जो आजीवन अविवाहित रह करके देश-सेवा का कार्य कर सकें। इस संस्था में बहुत से नवयुवक अपना नाम लिखवा चुके थे। सुभाष बाबू नें भी इस आश्रम के बारे में चर्चा सुनी। वे भी इस आश्रम के ध्येय को जानकर अत्यन्त प्रसन्न हुए। वे भी ऐसा ही चाहते थे। सुभाष बाबू ने भी अपना नाम उस आश्रम में लिखवा दिया और वे इसके सदस्य भी बन गए।

कालिज की पढ़ाई में सुभाष का मन नहीं लगता था। आश्रम को जब कोई भी कार्यकर्त्ता उनसे अपने काम में सहायता माँगता तो वे तुरन्त अपना सब काम छोड़ करके पहले उसका काम कर देते थे। सुभाष के मन में उथल-पुथल मचने लगी। कभी तो उसका मन

पढ़ाई छोड़ करके सेवा-कार्य करने को चाहता तो कभी सेवा-कार्य छोड़ करके पढ़ाई करने को। किन्तु फिर पिताजी का ध्यान आ जाता कि यदि वह पढ़ाई छोड़ देगा तो पिताजी को दुःख होगा। इसी समय (1914 ई० में) रामकृष्ण मिशन का वार्षिकोत्सव आरम्भ हो गया। सुभाष को पता चला कि स्वामी विवेकानन्दजी उस उत्सव में भाषण करेंगे तो उसका मन उसका भाषण सुनने के लिए मचल उठा। स्वामीजी के तेजोमय मुख का सुभाष पर गहरा प्रभाव पड़ा। सुभाष ने उनका भाषण ध्यानपूर्वक सुना और स्वामीजी के अन्त के वाक्य ने सुभाष पर जादू जैसा असर दिखाया। स्वामीजी का अन्तिम वाक्य उसके कानों में गूंजने लगा। "सत्य की खोज करो।"

सत्य की खोज

सुभाष उस रात को सो न सका। उसे बार-बार स्वामीजी के शब्द "सत्य की खोज करो" स्मरण हो रहे थे। अब वह सत्य को खोज करना चाहते थे परन्तु इन्हें कोई भी रास्ता नहीं सूझ रहा था। इनके मन में तरह-तरह के विचार आ रहे थे परन्तु उन्हें सुलझाने वाला कोई भी न था। एक दिन यह छुप करके "सत्य की खोज" में घर से निकल गए। ये मथुरा-काशी भी गए परन्तु कहीं भी इनकी धारणा का निवारण न हो सका। ये काशी होते हुए हरिद्वार पहुँचे।

वहाँ से वह हिमालय की ओर भी गए। इसी तरह साधु-महात्माओं के दर्शन करते हुए "सत्य की खोज" का रास्ता ढूंढ़ते रहे, किन्तु कहीं से भी कुछ हाथ नहीं लगा।

सुभाष के सहसा गायब हो जाने से घर में निराशा के बादल छा गए। इनके माता-पिता ने सुभाष बाबू की बहुत तलाश की। सभी धार्मिक स्थानों पर इनको तलाश किया परन्तु उनको सुभाष को ढूँढ़ने में असफलता ही मिली। अतः वे मन मारकर चुप हो गए।

इधर यात्रा में सुभाष बाबू बहुत से साधु-सन्तों से मिले। इस यात्रा में इनका परिचय प्रेमानन्द नामक एक संन्यासी से भी हुआ। ये पढ़े-लिखे और सज्जन पुरुष थे। वृन्दावन में इन्होंने एक साधु के पास वैष्णव शास्त्रों का अध्ययन भी किया। रामकृष्णमिशन काशी में भी यह ब्रह्मानन्द स्वामी के पास कुछ दिन रहे। स्वामीजी ने इन्हें घर लौटने की ही सलाह दी। काशी से फिर यहें बौद्ध गया आए। वहाँ पर इनको एक पंडा मिल गया उससे सुभाष बाबू ने अपने दिल की बात बताई। पहले तो पंडे ने इन्हें मूर्ख ही समझा। बाद में उसने कहा कि तुम यहाँ के सबसे बड़े गुरु की शरण में जाओ। वहाँ पर तुम्हें सब कुछ मिल जाएगा।

सुभाष को अपने मन की मुराद पूरी होती हुई दिखाई दी। सुभाष ने पण्डे से वहाँ तक पहुँचाने की प्रार्थना की। पण्डा मान गया।

सुभाष और पण्डा दोनों प्रसन्न होते हुए एक

विशाल मठ के दरवाजे पर आ पहुँचे। मठ के दरवाजे पर भक्तों की अपार भीड़ थी। यहाँ पर गुरु महाराज के दर्शन करने के लिए लाइन लगी हुई थी। दर्शन करने वालों में अधिकतर स्त्रियाँ ही थीं। वे सब सज-धज करके अन्दर जाने की प्रतीक्षा में थीं। सुभाष को वहाँ सारा वातावरण ही विचित्र-सा दिखाई दिया। पण्डे ने थोड़ी देर में ही सुभाष के लिए वहाँ ठहरने की व्यवस्था कर दी और गुरु-दर्शन के लिए दोनों ही लाइन में लग गए।

कुछ समय बाद यह एक सजे-सजाए कमरे में पहुँचे। कमरे में जगमगाहट थी, यहाँ की साज-सज्जा को देख करके आँखें चौंधिया जाती थीं। वातावरण अत्यन्त ही सुगन्धित था। सुभाष ने अपने सामने एक बड़े मोटे महन्त को चाँदी के आसन पर बैठे हुए देखा। सुभाष यह देखकर आश्चर्यचकित हो गया कि बड़े घराने की स्त्रियाँ महन्त की सेवा में लगी हुई हैं। यह सब देख करके सुभाष का हृदय ग्लानि से भर गया। उसे यह सब पाखण्ड दिखाई देने लगा। उसने अपने साथ आए हुए पण्डे से कहा, "यहाँ सत्य कहाँ है? मुझे यहाँ से ले चलो। यहाँ सत्य का नहीं अधर्म का दर्शन होगा।"

ये सब बातें सुभाष ने बड़े जोर से कही थीं जिसे गुरुजी ने सुन लिया था। गुरुजी ने पण्डे को शीघ्र ही सुभाष को अपने पास लाने का निर्देश दिया।

सुभाष गुरुजी के पास जाकर खड़े हो गए।

गुरुजी ने उनसे कहा, "तुमने मेरा अपमान किया है। इसका दण्ड जानते हो ?"

सुभाष ने कहा, "मैं इस देश का एक छोटा-सा सेवक हूँ, अतः आपके पाखण्डी जीवन को देख करके कैसे चुप रह सकता हूँ। मैं आपके पास सत्य के दर्शन करने आया था परन्तु आपके यहाँ तो असत्य के अतिरिक्त मुझे कुछ भी दिखाई नहीं पड़ रहा है।"

गुरुजी महाराज, "सत्य को जानने तुम्हें भक्ति करके प्राप्त होगा। गुरु के बताए रास्ते पर चलना होगा। जब यह सब करोगे तभी तुम्हें सत्य का बोध होगा, अन्यथा नहीं।"

सुभाष, "मुझे ऐसे गुरु की आवश्यकता नहीं है जो पाखण्डी हो और जिसमें विलासिता का रंग भरा हो और जो पथभ्रष्ट भी हो।"

गुरु महाराज, "होश में बात करो। जानते नहीं हो तुम किससे बातें कर रहे हो।" सुभाष ने जब गुरुजी की यह सिंह-गर्जना सुनी तो वह भी चुप नहीं रह सका। इसने गुरु महाराज को खूब खरी-खोटी सुनाई। गुरु महाराज को उन्होंने आड़े हाथों लिया। बात बढ़ गई। गुरुजी की आँखों से अंगारे बरसने लगे। परन्तु सुभाष बाबू तनिक भी नहीं घबराए। मंत्र माँगने आई हुई स्त्रियाँ गुरु के विलासिता के रंग से दूर जाने लगीं और गुरुजी को अपना सब वैभव मिट्टी में मिलता दिखाई देने लगा।

गुरु और उसके शिष्य शर्म से पानी-पानी हो गए

उन्हें अपने किए हुए पाप एक-एक करके स्मरण आने लगे। कुछ देर के लिए गुरुजी को अपनी भी सुध नहीं रही। जब गुरुजी को होश आया तो काफी समय हो गया था और तब उन्होंने मठ के द्वार बन्द करने की आज्ञा दे दी।

इस तरह सुभाष बाबू ने साधुओं की कुछ बुरी लीलाएँ भी देखीं। इसलिए इन्हें साधु-संन्यासियों के जीवन के प्रति घृणा उत्पन्न हो गई।

जब सुभाष बाबू सब ओर से निराश हो गए तब वे घर वापस आ गए। इन्हें पा करके माँ-बाप को इतनी प्रसन्नता हुई जितनी सर्प को अपनी खोई हुई मणि को पा करके होती है।

माता प्रभावती ने सुभाष को खाना खिलाया और बहुत-सी धार्मिक बातें बतलाईं। माता ने घर से भाग जाने का कारण भी पूछा परन्तु सुभाष संतोष-जनक उत्तर न दे पाया। परन्तु माँ से उसने अपनी पढ़ाई शुरू रखने का वायदा भी किया।

सुभाष बाबू कालेज में

सुभाष बाबू दिन-रात चिन्तित रहने लगे। इससे इनका स्वास्थ्य भी गिर गया। हमेशा सत्य के बारे में जानने का प्रयत्न करते रहे परन्तु इनकी आशा पूरी नहीं हुई।

स्वास्थ्य ठीक होते ही सुभाष बाबू ने पढ़ने में

अपना मन लगाया। इन्हें पढ़ने का बहुत ही कम समय मिलता था। फिर भी अपनी तीव्र बुद्धि से कालेज का सारा काम यह पूरा कर लेते थे। इन्होंने 1915 में एफ० ए० की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की। इसके बाद बी० ए० में प्रविष्ट हो गए। इनका मुख्य विषय दर्शन था।

प्रेसीडेन्सी कालेज में यह विद्यार्थियों के नेता भी बन गए। विद्यार्थी इनकी बातें बड़े ध्यान से तथा एकाग्रचित हो करके सुनते थे। कालेज में यह विद्यार्थियों का पक्ष ले करके अध्यापकों से वाद-विवाद भी किया करते थे। इन्हीं दिनों की बात है कि कालिज में विटिन नामक एक अध्यापक था। विद्यार्थियों से उसकी नहीं बनती थी। एक दिन विद्यार्थियों और विटिन में कहा-सुनी भी हो गई। बात आगे बढ़ गई।

क्लास लगी हुई थी। प्रोफेसर साहब ने एक विद्यार्थी से प्रश्न पूछा। वह विद्यार्थी उनके प्रश्न का कोई सन्तोषप्रद उत्तर नहीं दे सका क्योंकि प्रोफेसर का प्रश्न उसकी समझ में नहीं आ सका। प्रोफेसर ने अपनी आदत के अनुसार उस विद्यार्थी को गाली भी दी और अभद्र व्यवहार भी किया। विद्यार्थी ने यह सब-कुछ सहन कर लिया और प्रत्युत्तर नहीं दिया। किन्तु सुभाष बाबू उनकी कक्षा में प्रथम बार ही आए थे अतः उनको प्रोफेसर के आचरण के बारे में पता नहीं था। परन्तु जब उन्होंने एक प्रोफेसर के मुख से यह बातें सुनीं तो उनका हृदय विद्रोह कर उठा। फिर

भी वे शान्त रहे। उसने बड़ी नम्रता से प्रोफेसर को बताया कि उनका प्रश्न उसकी समझ में नहीं आया है। अतः प्रश्न को दुबारा स्पष्ट करने की प्रार्थना की।

यह सुन करके प्रोफेसर का क्रोध कम होने के स्थान पर और बढ़ गया और उनके मुँह से अभद्र शब्द निकलते ही गए।

सुभाष बाबू को यह सब अब असह्य हो गया। वे खड़े हो गये। प्रोफेसर ने क्रोध में ही उनको बैठ जाने के लिए निर्देश दिया।

सुभाष ने प्रोफेसर को बताया कि उनके मुँह से ऐसी अशोभनीय बातें नहीं निकलनी चाहिएँ। प्रोफेसर पर इसका कुछ भी असर नहीं हुआ और प्रोफेसर ने बालक को ब्लडी, माकी, रस्कल, आदि अभद्र शब्दों द्वारा सम्बोधित किया।

अब तक सुभाष शांत चित्त खड़ा था। अब उसकी रगों में खून जोश मारने लगा। उसका मुख क्रोध से लाल हो गया।

अचानक सुभाष को एक अदृश्य शक्ति ने प्रेरित किया। दूसरे क्षण ही सुभाष ने अंग्रेजी के प्रोफेसर की गर्दन दबा ली और उसके मुँह पर एक-दो तमाचे भी जड़ दिए। सुभाष ने उसे बताया कि यदि उसने दुबारा ऐसे शब्द मुख से निकाले तो वह उसकी जबान खींच लेगा।

फिर क्या था, सारे कालिज में यह घटना तुरन्त ही फैल गई। सभी ओर सुभाष की प्रशंसा हो रही

थी। जहाँ यह सब हो रहा था वहाँ पर अंग्रेजों को इस घटना से क्षोभ हो रहा था। वह अपना अपमान समझने लगे। वह यह कैसे सहन कर सकते थे कि एक भारतीय उनके भाई का अपमान कर दे। यह आज की घटना विदेशी सत्ता के लिए एक चुनौती दिखाई पड़ रही थी।

कालिज का सारा वातावरण दूषित हो गया। भारतीय विद्यार्थियों का स्वाभिमान जागृत हो गया। उनके दिलों में विदेशी सत्ता के प्रति घृणा उत्पन्न हो गई। इस तरह पहली वार भारतीय विद्यार्थियों के हृदय में यह घटना एक वरदान बन करके आई थी।

भारतीय विद्यार्थियों ने कालिज में हड़ताल कर दी। सुभाष का नेतृत्व और ऊँचा उठने लगा।

अंग्रेज अधिकारी भी इस स्थिति से पूर्णतया परिचित थे। उन्हें यह आभास होने लगा कि प्रोफेसर का चरित्र अनुचित तथा अभद्र था। यह सब समझते हुए भी वे सब चुप रहे। वे यह कैसे सहन कर सकते थे कि भारतीय विद्यार्थियों के आगे झुक जाएँ।

प्रोफसर ने विद्यार्थियों पर कई आरोप लगाए, जिनमें विद्यार्थियों द्वारा उस पर हमला करने का भी आरोप था।

आरोपों की सुनवाई अधिकारियों ने की। उन्होंने सुभाष को तथा अन्य विद्यार्थियों के व्यवहार को ही अनुचित बताया। नतीजा वही निकला, जिसकी लाठी उसकी भैंस। अधिकारियों ने सुभाष को कालिज से

INSTITUTE OF ADVANCED ... Acc. No. 7796

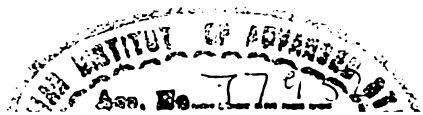

निकालने का फैसला सुना दिया। सुभाष के साथी अनंगमोहन दास को भी यही सजा मिली।

कालिज से निकाले जाने के निर्देश से सुभाष को तनिक भी हैरानी नहीं हुई। वे अधिकारियों के फैसले को जानतें ही थे। भला यह कैसे हो सकता था कि एक शासक अपने गुलामों से क्षमा-याचना कर ले। जिस समय उन्हें कालिज से निकाले जाने का आदेश हुआ उस समय इनका मस्तक गर्व से और ऊँचा उठ गया था। इनकी आँखों में एक नयी चमक आ गई थी।

कालिज के विद्यार्थियों ने सुभाष को भावपूर्ण विदाई दी। सुभाष को विदा करते समय उनकी आँखों में आँसू थे। भारतीय विद्यार्थी उसके चारों ओर खड़े थे। उन्होंने विद्यार्थियों की भावनाओं का आदर किया और उन्हें लगातार परिश्रम करने की सलाह दी जिससे वे आगे चल करके विदेशी सत्ता से टकरा सकें। उन्होंने उनके सामने एक प्रेरणादायक भाषण भी किया। विद्यार्थी खुश हो गए और 'सुभाष ज़िन्दाबाद' के नारों की गूंज आकाश में सुनाई देने लगी।

हाथ जोड़ करके सुभाष बाबू ने उनका अभिवादन किया। सुभाष कालिज छोड़ करके सीधा कटक पहुँच गया। सुभाष को अचानक आया देखकर उनके पिता जानकीदास जी आश्चर्यचकित रह गए। उनको किसी अशुभ घटना का आभास होने लगा। कुछ देर बाद उन्होंने सुभाष के आने का कारण पूछा।

सुभाष ने रायबहादुर को सब बातें विस्तार से बताईं और अन्त में यह भी बताया कि उन्हें कालिज से निकाल दिया गया है।

यह सुनते ही रायबहादुर का ऊपर का साँस ऊपर और नीचे का साँस नीचे रह गया। उन्हें यह जानकर दुःख हुआ कि सुभाष को कालिज से निकाल दिया गया है।

रायबहादुर ने सुभाष को ही पहले दोषी बताया। उन्होंने सुभाष को बताया कि वह अपना उत्तरदायित्व ठीक तरह नहीं निभा रहे हैं। उन्होंने गुरु का अपमान किया था। गुरु कैसा भी क्यों न हो उसकी बातों का सम्मान करना चाहिए था। रायबहादुर क्रोध से काँपने लगे।

बाबू सुभाष ने फिर बताया कि घटना कैसे घटी। परन्तु रायबहादुर की समझ में सुभाष की बातें नहीं आईं।

सुभाष ने कहा, "मेरी आत्मा स्वतंत्र है। उस पर वह किसी का भी अधिकार सहन नहीं कर सकता। अतः जब प्रोफेसर ने मेरे साथी को गाली दी तो मुझसे यह सब नहीं देखा गया। मुझे भी उसने अभद्र शब्दों से सम्बोधित किया तो मैंने अपने अपमान का बदला लिया। आप इसे गलत समझें या ठीक; परन्तु मैंने जो कुछ किया है वह मेरी बुद्धि के अनुसार उचित है। अतः मैं इसको अनुचित नहीं कह सकता।"

रायबहादुर ने कहा, "सारा परिवार तुम्हारी

बातों से दुःखी है। तुम क्या चाहते हो ; और तुम्हारा अब ध्येय क्या है ?"

सुभाष ने कहा, "मेरा ध्येय भारत को विदेशी शासकों से मुक्ति दिलाना है। मैं पराधीन नहीं रहना चाहता। मैं प्रत्येक भारतीय को स्वतन्त्र विचारों में विचरित होते देखना चाहता हूँ। गुलामी की जंजीरों को तोड़ देना चाहता हूँ। मैं भारतवासियों को इस तरह अपमानित होते नहीं देख सकता। मेरा भविष्य मुझे स्वयं दिखाई दे रहा है। अब मैं अपना रास्ता स्वयं बनाऊँगा। मेरी आत्मा सजग हो उठी है। मैं ब्रिटिश हकूमत से फौलाद बन करके टकरा जाऊँगा।"

"विदेशी सत्ता से टकराना कोई हँसी का खेल नहीं है। तुम जैसे अस्थिर विचारों वाला व्यक्ति भला विदेशी सत्ता से टकराने की क्या हिम्मत कर सकता है ?"

"पिताजी, आप ऐसी बातें न कहें। मेरे में आत्म-बल जाग उठा है। मैं अपने देश को आजाद देखना चाहता हूँ। गुलाम रहने से तो मरना अधिक अच्छा है। मैं आज आपके सामने प्रण करता हूँ कि जब तक मेरे में अन्तिम साँस भी शेष है। मैं विदेशी सत्ता से टकराऊँगा और भारतीयों को स्वतन्त्र कराके ही चैन लूँगा।"

जानकीदास को अपने बालक की बातों पर कुछ आश्चर्य हुआ। अपने पुत्र की बातों को उन्होंने बहुत ध्यानपूर्वक सुना और सोचा कि बालक की भावनाओं

को दबाना हितकर नहीं है। बालक के अन्दर जो आग सुलग रही है उसको भी दबाना अनुचित है। सुभाष की ओर मुँह करके उन्होंने कहा :

"मैं तुम्हारी भावनाओं का आदर करता हूँ। सफलता के लिए ऊँची भावनाएँ रखना आवश्यक है।"

बालक को जानकीदास ने बहुत सोच-विचार करने के बाद स्वतन्त्र रूप से कार्य करने की अनुमति प्रदान कर दी। सुभाष पर उन्होंने कुछ प्रतिबन्ध भी लगा दिए जिनको सुभाष ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। दो वर्ष तक ये कटक में ही रह करके सेवा-कार्य करते रहे। इन्होंने अपने कार्य-क्षेत्र का भी विस्तार किया। यहाँ कार्य करते हुए इन्होंने एक ऐसी योजना तैयार की जो भारतवर्ष को स्वतन्त्रता प्रदान करने में भविष्य में इनकी सहायक बनी।

कलकत्ता के वाइस चांसलर सर आशुतोष मुखर्जी की कोशिशों से सन् 1917 ई० में कलकत्ता विश्वविद्यालय में सुभाष बाबू को दोबारा दाखिला मिल गया। इन्होंने स्काटिश चर्च कालिज में अपनी पढ़ाई शुरू की। और इसी कालिज से इन्होंने बी० ए० की परीक्षा दर्शनशास्त्र ले करके उत्तीर्ण की।

उस समय सुभाष 22 वसन्त देख चुके थे।

सुभाष विदेश को

बी० ए० की परीक्षा पास करने के पश्चात्

इन्होंने एम० ए० में प्रवेश ले लिया। रायबहादुर साहब अब अपने पुत्र को और पढ़ाना नहीं चाहते थे। उनकी इच्छा थी कि अब सुभाष विलायत जा करके सिविल सर्विस की परीक्षा पास करे।

सुभाष की इच्छा विलायत जाने को नहीं थी। उनके हृदय में तो भारतवासियों के प्रति प्रेम उत्पन्न हो गया था। वे भारतवर्ष में ही रह करके उनकी सेवा करना चाहते थे। एक बार इन्होंने अपने प्यारे भारतवर्ष के बारे में कहा था, "भारतवर्ष में अब नवजागरण हो रहा है। मैं भारत में जन्म लेने पर अपने को धन्य समझता हूँ। मैं जब भी दोबारा जन्म लूँ तो भारतवर्ष की पुण्य-भूमि पर ही लूँ।"

जब सुभाष को रायबहादुर ने विलायत जा करके पढ़ने की आज्ञा दे दी तो सुभाष बाबू कुछ चिन्तामग्न हो गए। रायबहादुर ने सुभाष के मन का विचार भाँप लिया था, अतः वे सुभाष से बोले, "तुम विलायत जाना नहीं चाहते। कारण स्पष्ट है कि तुम बुद्धि में अंग्रेजों को मात नहीं दे सकते। इसीलिए डर रहे हो। जो इन्सान छोटी-छोटी बातों से डर जाए वह भला अंग्रेजों से कैसे टकरा सकता है? क्या वह भारतीयों को नया जीवन दे सकता है? कदापि नहीं। तुममें ऐसा धैर्य ही नहीं है। तुम अपने कर्त्तव्य से पीछे हट रहे हो।"

रायबहादुर की इन बातों ने अपना रंग दिखाया। सुभाष पिता के शब्दों को सुनकर तिलमिला गए।

उनका स्वाभिमान उन्हें पुकारने लगा। यह तुम्हारे लिए एक चुनौती है, इसका सामना करो।

सुभाष बाबू ने भी आवेशपूर्ण शब्दों में कहा, "सुभाष किसी से नहीं डरता। उसे डर किस बात का है। वह सत्य की राह पर चल रहा है और सदैव सत्य की ही जीत होती रही है और होती रहेगी। मैं विलायत जाऊँगा और सिविल सर्विस की परीक्षा भी आपको सम्मान सहित पास करके दिखा दूंगा। मैं आपको यह दिखा दूँगा कि सुभाष में अंग्रेजों से बुद्धि में भी टक्कर लेने की पूर्ण शक्ति विद्यमान है। आप मुझे लन्दन भेज दीजिए और इसमें तनिक भी विलम्ब न करिएगा। लन्दन जाने से पहले मेरी भी एक शर्त है। अतः उसको भी आपको मानना पड़ेगा।"

रायबहादुर ने उससे शर्त के बारे में भी पूछा।

सुभाष ने बताया कि वह सिविल सर्विस की परीक्षा पास करने के बाद सर्विस नहीं करेगा।

रायबहादुर साहब ने अपने बेटे की बात मान ली।

रायबहादुर साहब अपनी सफलता पर फूले नहीं समा रहे हैं। उनकी धारणा थी कि पढ़ करके सुभाष का मन शांत हो जाएगा और शीघ्र ही उसे सरकारी नौकरी भी मिल जाएगी। अतः इसीलिए सब कुछ जानते हुए भी इन्होंने सुभाष की भावनाओं को ठेस पहुँचाई थी। परन्तु इच्छाएँ कभी पूरी नहीं होतीं और अन्त में यही बात रायबहादुर जी के साथ भी घटी।

शीघ्र ही सुभाष ने विलायत जाने की तैयारी पूर्ण कर ली। और इस घटना के दो दिन बाद ही सुभाष ने 31 अगस्त 1919 को लन्दन के लिए प्रस्थान कर दिया।

लन्दन में

सुभाष की यह प्रथम विदेश यात्रा थी। वह भी खुश था कि चलो पढ़ने के बहाने ही मैं कुछ देशों का भ्रमण भी कर लूँगा जिससे मेरे ज्ञान में कुछ और वृद्धि हो जाएगी और पिताजी को तो मैं दिखा ही दूँगा कि सुभाष भी बुद्धि में अंग्रेजों से कम नहीं है।

सुभाष बाबू लन्दन पहुँच गए। लन्दन में इन्होंने कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी में प्रवेश ले लिया और अपनी पढ़ाई शुरू कर दी। विलायती जीवन का सुभाष पर अधिक प्रभाव पड़ा। जब यह उन्हें सभी के साथ अच्छा व्यवहार करते देखते तो इनका मन खुशी से नाच उठता था। वहाँ के बड़े आदमी हमेशा ही अपने कार्य में लीन रहते थे। इससे सुभाष को बहुत आनन्द मिलता था।

सुभाष ने वहाँ भारतीय विद्यार्थियों की गति-विधियों का भी अध्ययन किया। अधिकतर धनी व्यक्तियों और राजाओं के सुपुत्र ही यहाँ पर शिक्षा ग्रहण कर रहे थे। वे अपना समय सैर-सपाटे, विलासी तरुणियों के साथ घूमने में ही बिताते थे। बड़े-बड़े

होटलों में हर रोज़ दावतें होती थीं। इस तरह भारत-वासियों को धन बर्बाद करते देख करके सुभाष को दुःख होता था।

भारतीय राजकुमार से भेंट

कुछ दिन बाद उन्हें एक भारतीय राजकुमार ने सैर का निमन्त्रण दिया। सुभाष ने उसका रूखा-सा जवाब दिया। सुभाष ने कहा, "जो धन और समय दोनों की ही बर्बादी करता है उसके साथ भला वह कैसे घूमने जा सकता है।"

राजकुमार को सुभाष की बात पर क्रोध हो आया। उसने सुभाष को बताया कि वह आत्मीयता के नाते ही उसको निमंत्रण दे रहा है। अतः ऐसी बात कहना उसका अपमान करना है।

सुभाष ने उनकी बातों को तर्क-संगत बातों से काट दिया। उन्होंने बताया कि अपमान मेरी बातों से कम होता है। परन्तु इससे भी बड़ा अपमान गुलामी में रहना है।

राजकुमार, "मैं गुलाम नहीं हूँ। मैं अपनी एक रियासत का मालिक हूँ। मेरी सब इज्जत करते हैं और मुझे बड़े-बड़े लोग अपनी दावतों में बुलाते हैं।"

सुभाष, "तुम एक विदेशी सत्ता के अधीन हो। वह तुम्हारी रियासत कभी भी छीन सकती है। फिर तुम अपने आपको स्वतंत्र कैसे कह सकते हो। हमारा

सारा धन भारतवासियों पर खर्च न हो करके इंग्लैंड के बड़े-बड़े परिवारों पर खर्च हो रहा है। क्या यह शर्म की बात नहीं है ? क्या आपने कभी इन बातों पर विचार-विनिमय किया ?"

राजकुमार ने इन बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया। वह सुभाष को छोड़कर दूसरी ओर चला गया और सुभाष अपने होटल में आ गए।

जिन दिनों यह विलायत में पढ़ रहे थे, वहाँ पर भारतवासियों की एक सभा थी जिसका नाम 'भारतीय समिति' था। इस समिति का सप्ताह में एक कार्यक्रम होता था। इस कार्यक्रम में भारतीय विद्वानों के भाषण हुआ करते थे। सुभाष बाबू भी समिति के अधिवेशनों में सम्मिलित होते थे। श्रीमती सरोजिनी नायडू और लोकमान्य तिलक के इस समिति में अनेक बार भाषण हो चुके थे।

सन् 1921 में इन्होंने आई० सी० एस० की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास करने के साथ-साथ दर्शन-शास्त्र में ऑनर्स की डिग्री भी प्राप्त की।

सुभाष के पिता को जब यह ज्ञात हुआ कि उनका बेटा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुआ है तो उनको अत्यन्त प्रसन्नता हुई। अब उन्हें अपना स्वप्न साकार होते दिखाई दे रहा था।

अब सुभाष को बड़े पद का लालच दिया जाने लगा। इण्डिया आफिस के अधिकारियों ने भी इन पर दबाव डाला। पिता रायबहादुर साहब को इस बारे में

सूचित किया गया ।

रायबहादुर ने भी अपने बेटे को इस बारे में पत्र लिखा, परन्तु सुभाष ने इन सबके प्रस्ताव ठुकरा दिए। पत्र लिख करके इन्होंने पिताजी को अपने किए हुए वायदे का भी स्मरण दिलाया। आखिर इनके पिता को सुभाष के हठ के आगे झुकना पड़ा ।

सुभाष ने आई० सी० एस० का पद ठुकरा दिया। इससे सभी को निराशा हुई। सुभाष ने कहा, "मैंने सरकारी उच्च पद प्राप्त करने के लिए यह परीक्षा उत्तीर्ण नहीं की है। मैंने तो यह परीक्षा देश की सेवा के लिए उत्तीर्ण की है। अतः मैं अपने पद से त्याग-पत्र देता हूँ।" इस घटना से सभी लन्दनवासियों में हलचल मच गई। यह इतिहास में एक अभूतपूर्व घटना थी ।

क्राँतिकारी आन्दोलन में भाग लेना

सुभाष बाबू स्वदेश लौटे ।

अब सुभाष विलायत छोड़ करके स्वदेश लौट आए। यहाँ पर इन्होंने अपनी भावी योजनाओं पर विचार किया और उनको क्रियान्वित करने का प्रयत्न करने लगे ।

यह सन् 1921 की घटना है। महात्मा गांधी भी अब मैदान में आ गए थे। उन्होंने भारतवासियों को एक नई प्रेरणा दी। गांधीजी ने असहयोग आन्दोलन

भी चलाया और जिसमें इन्हें सफलता भी मिली। महात्मा गांधी ने साबरमती आश्रम भी शुरू किया। दूसरा आश्रम श्री अरविन्द ने पांडीचेरी में आरम्भ किया हुआ था। ये दोनों संस्थाएँ एक सुगठित ढंग से अपना कार्य कर रही थीं।

इसी समय चितरंजनदास ने भी अपने सहयोगियों की सहायता से बंगाल में भी एक क्रांतिकारी आन्दोलन आरम्भ कर दिया था।

सुभाष बाबू भी अब अपने-आपको और रोक न सके। सुभाष बाबू ने महात्मा गांधी तथा श्री अरविन्द की योजनाओं का भी अध्ययन किया परन्तु वे इनसे एकमत न हो सके। वे जानते थे कि ऐसी योजनाओं से काम नहीं चल सकता। भारत को ताकत की आवश्यकता है और ताकत इन योजनाओं से नहीं मिल सकती।

सुभाष श्री चितरंजनदास जी से भी मिले। दोनों ने आपस में विचार-विनिमय किया। श्री चितरंजनदास जी ने इनको अपने विचारों से अत्यधिक प्रभावित किया और सुभाष ने इनको अपना गुरु स्वीकार किया। सुभाष बाबू की त्यागभावना को देखकर श्री किरण-शंकर राय ने भी अपना पद त्याग दिया था।

सुभाष बाबू ने असहयोग आन्दोलन में श्री चितरंजनदास जी का साथ दिया। श्री देशबन्धु (श्री चितरंजनदास) जी का नाम बंगाल में गूँजने लगा।

श्री देशबन्धु ने नेशनल कालिज की भी स्थापना की। वे देश-सेवा के कामों को निरन्तर बढ़ावा देते थे और इसके लिए वे समाचारपत्र भी निकालते थे। अब यह काम सुभाष को सौंप दिया गया। सुभाष बाबू नेशनल कालिज के प्रधान भी बन गये थे।

सुभाष बाबू की वाणी में जादू था। इन्हें पा करके बंगाल का आन्दोलन और तेज हो गया। और सारे बंगाल में सुभाष का नाम गूँजने लगा था।

सरकार यह सब कुछ देख रही थी। अब सरकार और सहन न कर सकी।

बंगाल सरकार से टक्कर

बंगाल सरकार इससे चिंतित हो गई। वह अब इन कार्यों को रोकने के लिए नए उपायों पर विचार करने लगी। सरकार चाहती थी इस आंदोलन को और उग्र रूप धारण करने से पहले ही कुचल देना चाहिए।

इधर भारतीय कांग्रेस कमेटी ने सन् 1921 में असहयोग आंदोलन को और तेज कर दिया। राष्ट्रीय स्वयंसेवक भरती किए जाने लगे। इसने एक कोष भी स्थापित किया जिसका नाम स्वराज्य-कोष रखा गया। और इसके लिए धन एकत्रित किया जाने लगा।

देखते-देखते स्वयंसेवकों की संख्या तेजी से बढ़ने लगी। इस स्वयंसेवक सेना का नेता सुभाष ही चुना गया। अब इन स्वयंसेवकों को फौजी प्रशिक्षण भी देना आरम्भ हो गया। स्वयंसेवकों को वर्दियाँ भी दी गईं।

अब सरकार नए युवकों के जोशीले संगठन को देख करके और चिंतित होने लगी।

उस समय भारत में अंग्रेजों के विरुद्ध भारतीयों के हृदय में विद्रोह की भावना उत्पन्न हो गई थी। कारण, द्वितीय-विश्व युद्ध के पश्चात् ब्रिटिश सरकार ने अपना वायदा पूर्ण नहीं किया था। इस युद्ध में भी भारतीयों ने ब्रिटिश सरकार को पूर्ण सहयोग दिया था। इसके उपरान्त भी सरकार ने जलियाँवाला वाग में असंख्य निहत्थे भारतीयों को गोली का शिकार बना दिया था। भारतीयों पर तरह-तरह के प्रतिबन्ध लग रहे थे जिनमें रोलेट एक्ट भी था। अब भारतीय अपने-आपको अपमानित समझने लगे थे और उनमें भी अब प्रतिशोध की भावना उत्पन्न हो रही थी। ऐसे ही समय में प्रिन्स ऑफ वेल्स भारत-भ्रमण को आये।

जिस दिन वे बम्बई आए महात्मा गांधी ने वहाँ पर हड़ताल करवा दी और भारतीयों ने इस हड़ताल में अपना पूर्ण सहयोग दिया।

इधर सरकार और भी सतर्क हो गई। 25दिसम्बर सन् 1927 को प्रिंस ने कलकत्ता पहुँचना था। उसी दिन स्वयंसेवक दल (नेशनल वालंटियर कोर) को गैर-कानूनी घोषित कर दिया गया। कांग्रेस के कार्यकर्ताओं को जेलों में ठूँस दिया। इसी समय देशबन्धु ने बंगाल-वासियों को अपना अद्भुत सन्देश दिया जिसको सुन-कर प्रत्येक बंगालवासी का आत्म-अभिमान जाग उठा।

सुभाष का कलकत्ता का प्रदर्शन सफल रहा।

सारे कलकत्ता में हड़ताल हो गई। सारा शहर कब्रिस्तान नजर आने लगा। सुभाष का यह संगठित प्रदर्शन देख करके अधिकारियों को क्रोध हो आया। सुभाष तथा श्री देशबन्धु को भी पकड़ लिया गया। यहीं सुभाष को प्रथम बार आठ मास की सजा हुई। आन्दोलन बन्द हो गया। लगभग सभी कार्यकर्ताओं को जेल से मुक्ति मिल गई। सुभाष तथा श्री देशबन्धु भी जेल से छूट गए।

बाढ़ पीड़ितों की सहायता

जेल से बाहर आने पर इन्होंने एक अद्भुत दृश्य देखा। बाढ़ के कारण बंगाल में भीषण तबाही हुई थी। असंख्य लोग मारे गए थे। इस पर भी विदेशी सरकार के कान पर जूँ तक न रेंगी और सरकार ने बाढ़-पीड़ितों की सहायता के लिए कुछ भी नहीं किया।

सुभाष ने बाढ़-पीड़ितों की सहायता के लिए अन्न; धन, वस्त्र, दवाइयाँ आदि इकट्ठा करना शुरू कर दिया और इस कार्य में इन्हें बहुत सफलता मिली। सभी बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों को हर सम्भव सहायता प्रदान कराने में सुभाष ने भरसक प्रयत्न किया। सभी ने इनके कार्य की प्रशंसा की।

सुभाष बाबू आरम्भ से ही कांग्रेस के कामों में हाथ बँटाते आ रहे थे। कांग्रेसजनों में सुभाष बाबू अत्यन्त लोकप्रिय थे। सुभाष बाबू श्री देश-बन्धु के कामों में भी हाथ बँटाने लगे। देशबन्धु अब उसी

कौंसिल में पुनः प्रवेश पाने को उत्सुक थे जिसका उन्होंने बायकाट किया था। महात्मा गांधी के अनुयायियों को इनका यह कार्य पसन्द नहीं था। वे इसका विरोध करने लगे और इनके कामों के विरुद्ध आवाज़ उठाई।

गया में उसी समय कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। गया के इस अधिवेशन में सुभाष बाबू भी सम्मिलित हुए। इन्होंने कौंसिल प्रवेश के प्रस्ताव को पास कराने में देश-बन्धु की बहुत सहायता की।

इसी समय में मोतीलाल नेहरू ने स्वराज्य दल स्थापित किया। सुभाष और देशबन्धु भी इसी दल में शामिल हो गए। बंगाल में भी इसी दल की ओर से अपने प्रतिनिधि खड़े किए गए। सुभाष बाबू को सभी का सहयोग मिला और सब ओर इस चुनाव में स्वराज्य दल को सफलता मिली।

अब असहयोग आंदोलन बंद हो गया था। आंदोलन की समाप्ति के साथ ही कांग्रेस में भी फूट पड़ गई। सुभाष को इस फूट से बहुत दुःख हुआ। सुभाष तो देश को आज़ाद कराना चाहते थे। अतः अब इन्होंने एक नया दल खोजने का विचार किया और सन् 1922 में युवक दल की स्थापना करने में यह सफल भी हुए। इस दल का एकमात्र उद्देश्य भारतवर्ष को स्वतंत्र कराना ही था। इस दल के द्वारा उन्होंने श्रमिकों की बड़ी सेवा की। इन्होंने सभी अमीर-गरीबों का हृदय जीत लिया था।

कलकत्ता कारपोरेशन के एक्जिक्यूटिव के रूप में

बंगाल का युवक समाज अब इन्हें अपना नेता मानने लगा था। अतः सन् 1924 में इन्होंने कलकत्ता कारपोरेशन के चुनाव में भाग लिया। उसमें ये एक उम्मीदवार के रूप में खड़े भी हुए। इनके विरोध में कोई भी उम्मीदवार नहीं था अतः ये चुन लिए गए।

देशबन्धु मेयर चुने गए और सुभाष बाबू कलकत्ता कारपोरेशन के एक्जिक्यूटिव आफिसर बन गए। सुभाष बाबू ने इस पद पर रहते हुए बहुत से लोकप्रिय कार्य किए जिससे इनका नाम सभी के हृदयों में घर कर गया। इस पद पर रहते हुए सुभाष बाबू को 1500 रुपये मासिक वेतन मिलता था।

सुभाष बाबू इस पर अधिक दिन न टिक सके। इस पद पर रहते हुए उन्होंने 5 मास तक कार्य किया। नगर निवासी इनसे खुश थे। इन्होंने अमीर-गरीब के भेदभाव को मिटाने में भी महत्वपूर्ण सहयोग दिया।

सुभाष बाबू ने निष्पक्ष रहते हुए अपने कर्तव्य को निभाया। कई बार इनके सामने उलझनें भी आईं परन्तु इन्होंने अपनी तीव्र बुद्धि के बल पर सब उलझनों पर विजय प्राप्त कर ली।

आर्डिनेन्स एक्ट के विरोध में समय-समय पर जेल यात्रा

सन् 1924 में लार्ड लिटन ने बंगाल आर्डिनेन्स

एक्ट निकाला। सारे बंगाल में इसका विरोध हुआ और विरोध में प्रदर्शन भी किए गए। देशबन्धु और सुभाष विरोध करने वालों के अगुआ थे। सभी ओर गिरफ्तारियाँ होने लगीं। सभी कार्यकर्त्ता एक-एक करके गिरफ्तार होने लगे। सन् 1924 ई० के 21 अक्तूबर को सुभाष बाबू भी पकड़ लिए गये। इन पर किसी तरह का भी मुकदमा नहीं चलाया गया। और न ही इन्हें नियत समय के लिए कोई सज़ा दी गई।

सुभाष को अलीपुर जेल भेज दिया गया। जेल में रहते हुए भी इन्होंने कलकत्ता कारपोरेशन की सेवा में कोई ढील नहीं आने दी। सरकार को यह इनका काम भी अच्छा नहीं लगा अतः सुभाष को वहाँ से बदल करके बरहमपुर जेल ले आया गया। यहाँ पर भी सुभाष बाबू कुछ दिन रहे। इसके बाद ये ब्रह्मा के माण्डले जेल में आ गए। जेल में रहते हुए सुभाष ने दर्शन शास्त्र की कई पुस्तकें पढ़ीं जिससे इनके दार्शनिक विचारों में क्रान्ति आने लगी। जेल में यह अपना काम स्वयं ही करते थे।

निरन्तर परिश्रम करते रहने से सुभाष का स्वास्थ्य गिरने लगा। यह बीमार हो गए। सुभाष के फेफड़ों में खराबी हो गई। इनको अजीर्ण रोग हो गया। पीठ की रीढ़ की हड्डी में इनको दर्द रहने लगा जिससे रात-भर सो भी नहीं सकते थे। इनका वजन 40 पौंड कम हो गया। सन् 1927 के अप्रैल मास में तो इनको उठना-बैठना कठिन लगने लगा।

जब बंगाल के निवासियों को इनकी हालत का समाचार ज्ञात हुआ तो वे घबरा गए। सुभाष बाबू के छुटकारे के लिए प्रयत्न होने लगे। सरकार इन प्रयत्नों से कुछ ढीली पड़ गई। सुभाष बाबू को माण्डले जेल से हटा करके 'इनसिन' के सेन्ट्रल जेल में भेज दिया गया। यहाँ पर भी सुभाष बाबू की दशा में सुधार नहीं हुआ। इनका स्वास्थ्य दिन-प्रतिदिन गिरता ही जा रहा था। इनकी बिगड़ती हुई हालत को देख करके सरकार भी चिन्तित हो उठी।

सारे भारतवर्ष में अब इनकी रिहाई के लिए आन्दोलन हो गया। सरकार ने कुछ शर्तों के साथ सुभाष का छोड़ना मंजूर किया और अपनी शर्तें सुभाष को लिख करके भेज दीं। सुभाष ने सरकार के प्रस्तावों को ठुकरा दिया।

सरकार का प्रस्ताव अस्वीकार होने के बाद सरकार चिन्तामग्न हो गई कि सुभाष को अब कहाँ और किस तरह रखा जाए।

इधर भारतवासियों में सुभाष के बारे में तरह-तरह के समाचार सुने जाने लगे। अखबार वाले भी विचार प्रगट करने लगे। एक समाचार में लोगों को पता चला कि सुभाष मई में आएँगे। कुछ दिन बाद समाचार मिला कि सुभाष 12 मई को आएँगे। सुभाष का लोगों ने 12 मई को इंतजार किया पर सुभाष बाबू के दर्शन नहीं हुए। लोग निराश होकर घरों को वापस लौट आए। इसके बाद फारवर्ड समाचार पत्र

में यह खबर छपी कि सुभाष रविवार को 12 बजे कलकत्ता आएँगे ।

लाखों की संख्या में नर-नारी सुभाष के दर्शनों को वहाँ पर पहुँचे पर अन्ततः उनको निराशा ही हुई ।

वात असल में यह हुई थी कि सरकार ने सुभाष के भाई शरतचन्द्र को बुला लिया था अतः सुभाष को उनके साथ घाट से कुछ दूर पहले ही नाव पर पुलिस के पहरे में उतार लिया गया था ।

सुभाष का स्वास्थ्य गिरता ही गया । अन्त में सरकार ने निराश हो करके 15 मई सन् 1927 को बिना किसी शर्त सुभाष को रिहा कर दिया । रिहाई के वाद सुभाष वावू अपने एलारीन रोड के बंगले में आ गये । सारे भारतवर्ष में सुभाष की रिहाई से प्रसन्नता की लहर दौड़ गई । जनता सुभाष के स्वास्थ्य लाभ के लिए प्रार्थनाएँ करने लगी ।

ईश्वर ने जनता की प्रार्थना को सुना, और सुभाष बावू के स्वास्थ्य में सुधार होने लगा । थोड़े ही समय में सुभाष अच्छे हो गए और पुन सक्रिय राजनीति में प्रविष्ट हो गए ।

सन् 1929 में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ । इसके सभापति पं० मोतीलाल नेहरू थे । पं० मोतीलाल नेहरू ने स्वराज्य प्राप्त करने के लिए एक रिपोर्ट तैयार की जो नेहरू रिपोर्ट के नाम से प्रसिद्ध है । सभा ने इस रिपोर्ट का विरोध किया परन्तु सुभाष वावू ने इस रिपोर्ट को एक वर्ष के लिए अधिवेशन में स्वीकार

करवा लिया। कलकत्ता कांग्रेस का अधिवेशन समाप्त हो गया।

कलकत्ता कांग्रेस के कुछ दिनों के पश्चात् ही श्री यतीन्द्रनाथ (जो बंगाल के प्रसिद्ध देश-सेवी थे) का देहान्त हो गया। इस समाचार से चारों ओर शोक छा गया। श्री यतीन्द्रनाथ जी की अर्थी का जलूस धूम-धाम से निकाला गया। सभी देशभक्त इस जलूस में सम्मिलित हुए। सुभाष बाबू भी उन्हीं में थे।

सुभाष बाबू ने एक भाषण भी दिया जिसमें श्री यतीन्द्रनाथ के कार्यों की प्रशंसा की और अपने स्वतन्त्र विचार भी प्रकट किए।

सरकार सुभाष बाबू से पहले ही नाराज थी और जो भाषण सुभाष बाबू ने श्री यतीन्द्रनाथ की मृत्यु पर दिया उसको सरकार सहन न कर सकी। सरकार ने उस भाषण को अनुचित बताया और सुभाष को गिरफ्तार करके उन पर मुकदमा चलाया। मुकदमे में सुभाष बाबू को अपराधी घोषित किया गया और उनको छः मास की सजा दी गई।

अब महात्मा गांधी ने भी सत्याग्रह संग्राम आरम्भ कर दिया। चारों ओर से इसका स्वागत हुआ। बड़े-बड़े लोग नमक कानून को तोड़ने लगे। सरकार ने सभी को जेलों में बन्द कर दिया। आन्दोलन कम नहीं हुआ, बल्कि आंदोलन जोर पकड़ने लगा।

अब सुभाष बाबू भी जेल से आ गए थे। सुभाष ने नवयुवकों को एक नया सन्देश दिया था जिसे सुन

करके हजारों नवयुवक सुभाष के एक इशारे पर मर-मिटने को तैयार रहते थे। सरकार यह देखकर घबरा गई थी। सरकार यह जानती थी कि सुभाष के इस आंदोलन में कूदने से यह आंदोलन और उग्र रूप धारण कर लेगा। अतः सुभाष को आंदोलन शुरू होने से पहले ही जेल भेज दिया गया।

इस आंदोलन ने काफी जोर पकड़ा। असंख्य व्यक्ति जेल जा चुके थे। आंदोलन में कोई कमी नहीं हुई। सरकार कुछ हिल गई। सरकार अब कांग्रेस से समझौता कर लेना चाहती थी। इन दिनों भारत के वायसराय इर्विन महोदय थे। इर्विन और महात्मा गांधी में समझौते की बातचीत होने लगी। इसी समझौते के अनुसार महात्मा गांधी गोल मेज कान्फ्रेंस में भाग लेने लन्दन गए।

इसी समझौते के अन्तर्गत सभी बड़े-बड़े नेता जेल से छोड़ दिए गए। सुभाष भी छूट गए। यह समझौता स्थायी न हो सका। कुछ दिनों पश्चात् सरकार और कांग्रेस में दोबारा तनाव हो गया। महात्मा गांधी को लन्दन से वापस आने पर पुनः गिरफ्तार कर लिया गया। शेष नेता भी दोबारा जेलों में ठूँस दिये गये। जेलें भर गईं। आंदोलन भी समाप्त हो गया।

सुभाष बाबू नहीं पकड़े गये। सरकार इन पर आँख लगा करके बैठी थी।

कांग्रेस की कार्यसमिति ने जब आन्दोलन बन्द कराने का प्रयास किया तो सुभाष ने इसका तीव्र

विरोध किया। बाद में महात्मा गांधी ने प्रस्ताव पास करवा करके आन्दोलन स्थगित करवा दिया।

आंदोलन बंद हो रहा था। आंदोलन बंद करने की सभी ने कड़ी आलोचना की। इन्हीं दिनों में मथुरा में नवजवान भारत सभा का वार्षिक अधिवेशन आरम्भ हुआ। सुभाष बाबू को इसके सभापति का पद मिला। सुभाष बाबू ने जो भाषण दिया उसमें भारतवर्ष के किसानों और श्रमिकों का सजीव वर्णन था। सुभाष बाबू के भाषण का नवयुवकों पर गहरा प्रभाव पड़ा। सरकार को यह अच्छा नहीं लगा। सुभाष बाबू के भाषण पर सरकार ने आपत्ति की और सुभाष बाबू को गिरफ्तार कर लिया गया।

सुभाष बाबू को अनिश्चित काल के लिए जेल भेज दिया गया। इन पर किसी तरह का भी मुकदमा नहीं चलाया गया और न ही किसी निश्चित समय के लिए सजा ही हुई। पहले इनको अलीपुर जेल में रखा गया, परन्तु बाद में इनको सिवनी भेज दिया गया।

सुभाष बाबू ने बहुत समय जेलों में ही व्यतीत किया। अतः लगातार जेलों में रहने के कारण इनके स्वास्थ्य पर कुप्रभाव पड़ा। पुराने रोग ने इनको दोबारा घेर लिया। इनको ज्वर रहने लगा। पीठ की रीढ़ की हड्डी में दर्द शुरू हो गया।

देशवासियों को जब सुभाष की दशा का पता चला तो वे इनके छुटकारे के लिए प्रयत्न करने लगे। सरकार पर दबाव पड़ने लगा। सरकार दबाव के

आगे झुकी नहीं। सरकार सुभाष को छोड़ना नहीं चाहती थी। जब सुभाष की हालत खराब हो गई तो सरकार ने इनकी चिकित्सा का भी प्रबंध कर दिया।

सुभाष बाबू को अब मिंवनी जेल से चिकित्सा के लिए लखनऊ लाया गया। कुछ समय तक लखनऊ में इनका इलाज होता रहा परन्तु उससे कोई फायदा नहीं हुआ। डाक्टरों का परामर्श मानकर भुवाली सैनीटोरियम भेज दिया गया। यहाँ पर भी इनकी दशा में तनिक भी सुधार नहीं हुआ।

विदेश में

सुभाष की यह हालत देख करके सरकार की चिन्ता बढ़ गई। सरकार सुभाष को छोड़ना नहीं चाहती थी और उधर सुभाष बाबू का स्वास्थ्य दिन-प्रतिदिन गिरता जा रहा था। सरकार दुविधा में पड़ गई। इधर सारे भारतवासियों ने सरकार के विरुद्ध आवाज़ भी उठा दी।

सरकार ने डाक्टरों से परामर्श किया। अन्त में सरकार ने सुभाष को इस शर्त पर छोड़ दिया कि वे जेल से छूटते ही चिकित्सा के लिए विदेश चले जाएँगे।

पहले सुभाष ने सरकार की शर्त को ठुकरा दिया, किन्तु जब जनता ने उन पर सरकार की शर्त मानने के लिए दबाव डाला तो उन्होंने सरकार की शर्त स्वीकार कर ली।

सुभाष बाबू को अपने माता-पिता से भी नहीं

मिलने दिया गया। वे जेल से छूटते ही 23 फरवरी सन् 1932 को वायुयान द्वारा स्विटजरलैंड के लिए रवाना हो गए।

स्विटजरलैंड में इनकी चिकित्सा आरम्भ हो गई। यहाँ पर इनके स्वास्थ्य में काफी सुधार हुआ।

अस्वस्थ रहने पर भी सुभाष ने विदेशों में भारत के लिए महत्त्वपूर्ण कार्य किए। स्विटजरलैण्ड से ये रोम गए जहाँ ये मुसोलिनी से मिले। आयरलैण्ड के अध्यक्ष से भी इनकी भेंट हुई। रोम के अतिरिक्त इन्होंने लन्दन, फ्रांस और जर्मनी आदि देशों का भी भ्रमण किया।

इन देशों में सुभाष ने कई भाषण दिए। वहाँ से भारतवासियों को नई प्रेरणाएँ दीं जिससे वे भारत को स्वतंत्रता दिलाने में सहायक हो सकें।

सुभाष जहाँ भी गए वहीं इनका भव्य स्वागत हुआ। सुभाष बाबू विदेशों में तीन वर्ष तक रहे। अब वे पूर्णतः स्वस्थ हो गए थे। अब ये वापस भारत आना चाहते थे। सरकार इनको भारत वापिस आने नहीं देना चाहती थी।

इन्हीं दिनों सुभाष बाबू के पिता श्री जानकीनाथ अस्वस्थ हो गए। जानकीनाथ की दशा अत्यन्त शोचनीय हो गई। तब इनकी बीमारी का समाचार सुभाष बाबू को भेजा गया। मरने से पहले जानकीनाथ अपने सुपुत्र से एक बार भेंट कर लेना चाहते थे।

सरकार पर भी दबाव डाला गया। सरकार

सुभाष को वापस नहीं आने देना चाहती थी। अन्त में इस शर्त के साथ कि सुभाष बाबू अपने पिता से भेंट करके शीघ्र ही विदेश वापस लौट जाएँगे; सुभाष को अपने पिता से भेंट करने की आज्ञा मिल गई।

सुभाष बाबू शीघ्र ही स्वदेश के लिए रवाना हुए। हवाई अड्डे पर लाखों की संख्या में एकत्रित हो करके जनता ने अपने प्राणप्रिय नेता का स्वागत किया। जनता ने 'सुभाष जिन्दाबाद' के नारे भी लगाये।

हवाई जहाज़ से उतरते ही दो सिपाहियों ने सुभाष को एक ओर ले जा करके एक बन्द मोटर में बिठा करके उनके घर पर उतार दिया। मकान के चारों ओर पुलिस का पहरा था।

परन्तु भाग्य की बात, जानकीनाथ की अपने बेटे से मिलने की इच्छा पूर्ण नहीं हुई। सुभाष के आने से पहले श्री जानकीनाथ का देहावसान हो चुका था। सुभाष यह सब देख करके रो पड़ा। उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बह चली वह शेर जो विदेशी सत्ता से टकरा रहा है अपने भाग्य पर आँसू बहा रहा था। सुभाष ने पिता का दाह-संस्कार किया।

पिता की मृत्यु के बाद सरकार ने इन पर बहुत से प्रतिबन्ध लगा दिए। 10 जनवरी सन् 1935 को अपने वायदे के अनुसार दोबारा यूरोप के लिए रवाना हो गए।

सुभाष बाबू ने जेलों में रह करके एक पुस्तक लिखी थी। पुस्तक का नाम (Indian Struggle) था।

यह पुस्तक अंग्रेजी भाषा में थी। विदेशों में यह पुस्तक बहुत लोकप्रिय हुई। विद्वानों ने भी इसकी बड़ी ही प्रशंसा की।

ब्रिटिश सरकार ने इस पुस्तक को जब्त करने का आदेश दे दिया। ब्रिटिश सरकार ने इस पुस्तक को ब्रिटिश सरकार विरोधी बताया था।

अब सुभाष ने विदेश दोबारा आने पर अपना कार्य शुरू कर दिया। भारतवासियों के बारे में वहाँ की जनता को बताया तथा उनकी आर्थिक तथा राजनैतिक कठिनाइयों का वर्णन किया। संसार के सभ्य लोगों से अपने विचार-विनिमय किए।

सुभाष भ्रमण करता हुआ जर्मनी की राजधानी बर्लिन भी पहुँचा। यहाँ पर इनका हार्दिक स्वागत हुआ। 3 फरवरी 1936 को पेरिस होते हुए डबलिन पहुँचे। आयरलैंड में श्री डी० बलेरा तथा सुभाष के मध्य महत्त्वपूर्ण वार्तालाप हुआ। ब्रिटिश सरकार यह सब देखकर घबरा गई पर कर कुछ न सकी। सुभाष लन्दन भी जाना चाहते थे परन्तु ब्रिटिश सरकार ने आज्ञा नहीं दी।

सुभाष बाबू विदेश में रहते-रहते तंग आ गए थे। वे भारत वापस आना चाहते थे परन्तु ब्रिटिश सरकार ने इन्हें आने की आज्ञा नहीं दी।

इन्हीं दिनों लखनऊ में कांग्रेस का अधिवेशन हो रहा था। अधिवेशन के सभापति जवाहरलाल नेहरू थे। नेहरूजी की इच्छा थी कि सुभाष को कांग्रेस का

प्रधानमंत्री बनाया जाए। तार द्वारा सुभाष को इसकी सूचना भेज दी गई। सुभाष बाबू को तार मिला। अतः वे सरकार की आज्ञा को भंग करके लखनऊ कांग्रेस के अधिवेशन में सम्मिलित होने के लिए यूरोप से भारत रवाना हो गए। सरकार ने भी इस खबर को सुना। जनता ने भी यह खबर सुनी। 8 अप्रैल सन् 1936 को बम्बई में अपार जनसमूह अपने नेता का स्वागत करने उमड़ पड़ा।

जहाज उतरा। सुभाष को नीचे आते ही तुरन्त गिरफ्तार कर लिया गया और उन्हें किसी से भी मिलने की आज्ञा नहीं मिली।

श्री नेहरू को भी सुभाष की गिरफ्तारी का पता चला। उन्होंने भी सुभाष को छोड़ने के लिए सरकार पर दबाव डाला किन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली।

सुभाष का जेल में स्वास्थ्य गिरने लगा। डाक्टरों का कहना था कि पुराना रोग दोबारा उमड़ रहा है।

सुभाष के साथ अन्याय हुआ था। इससे सारे भारत में क्रोध की ज्वाला भड़कने लगी। ब्रिटिश सरकार की आलोचना भारत में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी होने लग पड़ी। सरकार को संसार के आगे झुकना पड़ा। अतः 17 मार्च 1936 को सुभाष को बिना शर्त जेल से मुक्त कर दिया गया।

जेल से छूटने पर सुभाष के स्वास्थ्य में सुधार नहीं हुआ। वे डलहौजी भी गए। डा० धर्मवीर ने उनकी चिकित्सा की परन्तु हालत सुधरी नहीं। अन्त

में डाक्टरों से परामर्श ले करके पुनः यूरोप गए।

सुभाष को इंगलैंड जाने की भी आज्ञा सरकार से मिल गई। लन्दन में रहते हुए उन्होंने एटली, सैल्सबरी, लार्ड रसेल आदि व्यक्तियों से भी भेंट की। यहाँ पर इन्होंने भारत की स्वतन्त्रता के लिए नियोजित ढंग से प्रचार भी किया।

अब सुभाष के स्वास्थ्य में सुधार हो चला। सुभाष बाबू देश के प्रसिद्ध देश-सेवी थे। भारत को इनके त्याग पर गर्व था। इधर कांग्रेस का अधिवेशन सन् 1938 फरवरी मास में हरिपुरा में होना निश्चित हुआ था। इस अधिवेशन के सभापतित्व के लिए सुभाष का नाम चुना गया और इसकी सूचना तार द्वारा सुभाष को दे दी। सुभाष बाबू सूचना मिलते ही 14 जनवरी 1938 को भारत वापस लौट आए।

यहाँ पर सभापति पद से सुभाष ने जो भाषण दिया वह अत्यन्त ओजस्वी भाषा में था। भाषण बड़ा ही प्रभावशाली और जोशीला था। उन्होंने जनता को बताया कि वे अब और इंतजार नहीं कर सकते। हमें आज़ादी मिलनी ही चाहिए और इस आज़ादी की प्राप्ति के लिए हमें ब्रिटिश सरकार से संघर्ष करना ही पड़ेगा। महात्मा गांधी ने उन्हें दीर्घजीवी होने का आशीर्वाद दिया।

हरिपुरा कांग्रेस के बाद सुभाष बाबू ने पूरे देश का भ्रमण किया। इस समय इनके और काँग्रेस के विचारों में मतभेद पैदा हो गया। कांग्रेस दो दलों में

बँट गई। सुभाष ने तनिक भी विश्राम नहीं किया। बड़े-बड़े नेता भी हैरान थे। सन् 1939 के मार्च मास में त्रिपुरी कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। रामगढ़ कांग्रेस में तो महात्मा गांधी ने फूट नहीं पैदा होने दी परन्तु अब त्रिपुरा कांग्रेस में फूट पैदा हो गई। सुभाष बाबू ने अपना दल अलग बना लिया और दूसरा दल जो गांधी दल कहलाता था, अलग हो गया।

यहाँ पर सुभाष की जीत हुई। त्रिपुरी कांग्रेस में सुभाष ही सभापति चुने गये। इनके विरोधी डा० पट्टाभि सीतारमैया चुनाव में परास्त हो गये।

त्रिपुरी कांग्रेस में सुभाष ने एक प्रस्ताव तैयार किया जिसमें अंग्रेज़ों को छः मास के अन्दर-अन्दर भारत से निकालने की प्रतिज्ञा थी। गांधी तथा नेहरू ने इस प्रस्ताव का विरोध किया। सुभाष तथा गांधी में पत्र व्यवहार भी हुआ परन्तु समझौता नहीं हो सका।

कलकत्ता कांग्रेस कमेटी की बैठक 29 अप्रैल 1939 को हुई। सुभाष ने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया।

अग्रगामी दल की स्थापना

सुभाष ने अब एक नये दल की स्थापना कर ली। इस दल का नाम अग्रगामी दल (Forward Block) रखा गया। इसकी स्थापना मई, 1939 में हुई। इस दल के प्रचार के लिए उन्होंने "एडवांस" नामक अंग्रेजी पत्रिका का भी प्रकाशन आरम्भ किया।

इस दल के प्रचार के लिए सुभाष ने भारत-भ्रमण किया और इसकी शाखायें भी खोलीं।

कुछ ही समय में अग्रगामी दल सारे भारतवर्ष में छा गया इसके विचारों से सभी प्रभावित भी हुए।

इस संस्था का पहला अधिवेशन 22-23 जून को बम्बई में हुआ। इस अधिवेशन में सुभाष ने जोशीला भाषण किया जिसको सुनकर मुर्दों में भी जान आ जाती थी। चारों ओर आजादी का बिगुल बज उठा।

सुभाष ने सर्वप्रथम कलकत्ता स्थित "हालवैल स्मारक" के विरुद्ध आन्दोलन आरम्भ किया। वे इस स्मारक को जनता की दृष्टि से हटा देना चाहते थे। इस आन्दोलन में सुभाष ने जान डाल दी थी। सुभाष ने सरकार से पत्र-व्यवहार किया परन्तु स्मारक को हटाने में असफल रहे।

सुभाष ने सरकार को सत्याग्रह करने की धमकी दी। सुभाष को सरकार ने 2 जुलाई 1940 को गिरफ्तार कर लिया। उनके पकड़े जाने पर भी आन्दोलन निश्चित समय पर आरम्भ हो गया। यह आंदोलन दो सप्ताह चला और अन्त में सरकार ने घुटने टेक दिए और पराधीनता का एक निशान भी मिट गया।

देश के विभिन्न भागों में से लगभग दस हजार व्यक्ति बन्दी बनाए गए। जब सुभाष जेल में थे तो उन पर कई अभियोग लगाए गये। सुभाष ने कैदियों के साथ होने वाले दुर्व्यवहार के बारे में सरकार को अवगत कराया। जब सरकार ने उनको उचित उत्तर

नहीं दिया तो सुभाष ने सरकार को पत्र लिख करके अनशन करने की धमकी दे दी।

26 नवम्बर 1940 को सुभाष बाबू ने भूख-हड़ताल शुरू कर दी।

सुभाष का स्वास्थ्य पहले ही खराब था। अब भूख हड़ताल से उनका स्वास्थ्य और भी गिरने लगा। सरकार ने मजबूर हो करके 5 दिसम्बर को सुभाष को मुक्त कर दिया। किन्तु उनके घर के चारों ओर पुलिस का पहरा भी बैठा दिया गया।

घर में सुभाष को सभी नागरिक सुविधाओं से वंचित रहना पड़ा। बाहर की दुनिया के बारे में उनको कोई भी सूचना नहीं प्राप्त हो रही थी; कारण सरकार ने समाचारपत्रों के जाने पर रोक लगा दी थी।

यह वह समय था जब यूरोप में लड़ाई आरम्भ हो गई। जर्मनी की जीत हो रही थी। जापान भी मैदान में आ गया था। अंग्रेज और रूसी आपस में मिल गए।

इसी समय कांग्रेस के बड़े-बड़े नेता भी स्वाधीनता का आन्दोलन छेड़ना चाहते थे पर दूसरे नेताओं का उन्हें समर्थन नहीं मिल रहा था।

पठान के भेष में छुपकर निकलना

सुभाष बाबू को भी अब कोठरी में कैदी की तरह रहना पसन्द नहीं था। वह वहाँ से भागने के उपायों पर विचार करने लगे। आखिर एक उपाय उन्हें

समझ आ गया और उनके चेहरे पर चमक आ गई।

कई मास बीत गए। एक दिन यह भारत का शेर कोठरी मे पठान का भेष बना करके अपने मकान के गुप्त द्वार से भागने में सफल हो गया। सुभाष गलियों के चक्कर लगाता हुआ एक मकान के सामने पहुँच गया। उसने दरवाजा खटखटाया और एक युवक ने उनका स्वागत किया। युवक ने अपनी कार पर जाली नम्बर लगा करके सुभाष को उसमें बैठाया और अपनी कार को तेज़ी के साथ वर्दवान स्टेशन ले गया सुभाष स्टेशन से फ्रन्टियर मेल में सवार हो गया और युवक वापस आ गया।

सुभाष के भागने का समाचार 7 जनवरी 1941 को सम्पूर्ण भारतवर्ष में फैल गया। सुभाष के इस तरह गायब हो जाने से सरकार घबरा गई। सारे भारत में गुप्तचरों का जाल बिछा दिया गया। सुभाष को ज़िन्दा या मुर्दा पकड़ने के लिए निर्देश दे दिए गए।

नेताजी गुप्तचरों को धोखा देते हुए पेशावर पहुँच गये। पेशावर से वे एक जाली पासपोर्ट द्वारा एक ट्रक क्लीनर बन करके काबुल पहुँच गये। काबुल की पुलिस को इन पर शक हो गया और इनसे तरह-तरह के प्रश्न पूछे जाने लगे। सुभाष ने उनको रुपया दे करके अपनी जान बचाई और अन्त में उन्हें अपनी घड़ी भी एक गुप्तचर को भेंट ही करनी पड़ी अन्यथा सुभाष की वास्तविकता का पता चल जाता।

काबुल में नेताजी ने रूसी दूतावास से सम्पर्क

किया। रूसी दूतावास ने इनको सहायता देने में असमर्थता प्रकट कर दी। रूसी दूतावास से निराश होने पर वे इटली और जर्मनी के दूतों से मिले और मास्को होने हुए जर्मनी पहुँच गए।

जर्मन सरकार का सहयोग

जर्मन में नेताजी का भव्य स्वागत हुआ। जर्मनी में सुभाष के आगमन का समाचार गुप्त ही रखा गया। लेकिन फिर भी एक अमेरिकन सम्वाददाता को सुभाष के आने का समाचार ज्ञात हो गया था। अतः वे सुभाष से मिलना चाहते थे।

सुभाष वहाँ के एक होटल में ठहरे हुए थे। होटल का मैनेजर जर्मन था। अमेरिकन सम्वाददाता होटल में, जिसमें सुभाष ठहरा हुआ था, एक कमरा लेने के लिये गया परन्तु उसे कमरा नहीं मिल सका। कारण जर्मन मैनेजर ने बताया कि सारी मंजिल रुकी हुई हैं अतः यहाँ पर कोई जगह खाली नहीं है। सम्वाददाता वापस आ गया।

दूसरे दिन इन्होंने सुभाष को फोन पर मिलने के लिए समय माँगा। सुभाष को इस समय मिलने का अवसर नहीं था, अतः इन्हें तीन दिन बाद मिलने की आज्ञा मिली। इस भेंट का समाचार रेडियो से सुना दिया गया।

हिटलर सुभाष के व्यक्तित्व से इतना प्रभावित हुआ कि इन्हें भारत के डिप्टी फ्यूरहर की उपाधि दी

और राजदूत का सम्मान प्रदान किया।

जर्मन सरकार ने इन्हें एक वायुयान तथा एक रेडियो ट्रांजिस्टर भी भेंट किया जिससे समय-समय पर इन्होंने अपने सन्देश प्रसारित किये।

बर्लिन और हेमबर्ग के बीच में हिटलर और सुभाष की मुलाकात हुई। बर्लिन के समाचारपत्रों ने दोनों की तस्वीर को प्रथम पृष्ठ पर छापा था।

कई समाचारपत्रों ने सुभाष के जीवन के बारे में लेख भी छापे। समाचारपत्रों ने सुभाष के संघर्ष की पूरी सराहना की।

यह भेंट करने के बाद सुभाष बाबू हेमबर्ग आ गये। यहाँ पर अपार जन समूह ने सुभाष का स्वागत किया। स्वागत करने वालों में हेमबर्ग के मेयर भी थे। इन्होंने सुभाष को एक गुलदस्ता भी भेंट किया।

दूसरे दिन सुभाष का हेमबर्ग कार्पोरेशन ने नागरिक अभिनन्दन किया। भारत और हेमबर्ग के झण्डे सड़कों तथा मंच पर एक साथ लहरा रहे थे।

भाषण के आरम्भ होने से पूर्व जर्मनी का राष्ट्रीय गीत तथा भारतीय बन्देमातरम् का गीत गाया गया। इसके बाद मेयर ने मान पत्र पढ़ा। मान पत्र के अन्त में उन्होंने सुभाष से अपने विचार भी प्रकट करने का आग्रह किया।

सुभाष ने स्वागत-समारोह का उत्तर संक्षेप में दिया। भव्य स्वागत करने के लिए इन्होंने वहाँ की जनता के प्रति आभार भी प्रकट किया।

सुभाष ने वहाँ की एक लड़ाई के एक मोर्चे का भी निरीक्षण किया। मोर्चे का निरीक्षण करने के बाद सुभाष की भेंट योरूशलम के मुफ़ती आजम से हुई। इनकी अरब निवासी बड़ी इज्जत करतें थें। आप और सुभाष का लक्ष्य एक ही था। अपने अपने देश को स्वतन्त्र कराना। वे अंग्रेज़ों के विरुद्ध सहायता लेने के लिए जर्मनी आये हुये थे। सुभाष इस नेता से मिलकर बहुत खुश हुए। दोनों में मित्रता हो गई। कई बार जर्मन रेडियो पर भाषण करते हुये मुफ़ती आज़म ने भारतीय मुसलमानों को अंग्रेजों के विरुद्ध उभारा था।

जर्मनी में रहते हुये सुभाष को वहाँ की जनता तथा सरकार ने पूरा सम्मान दिया। वहाँ पर सुभाष ने कई युद्ध-मोर्चों का निरीक्षण किया था और इन्होंने लड़ाई के ढंग के बारे में अत्यधिक ज्ञान भी प्राप्त किया।

जर्मनी से आप इटली भी गए। वहाँ पर आपने मुसोलिनी यथा उनके दामाद काउण्ट सियानों से भी मिले। वहाँ के प्रवासी भारतीयों को भी इकट्ठा करने में इन्होंने कोशिश की और उसमें इनको सफलता भी प्राप्त हुई। वहाँ के युद्ध-बन्दियों की भी सहायता से इन्होंने एक आज़ाद हिन्द फौज़ की स्थापना की जो कि भारतीयों की आज़ादी के प्रचार में हाथ बंटाने लगी। इस समय आज़ाद हिन्द फौज़ की संख्या अधिक न थी।

बर्लिन रेडियो से सुभाष ने अपना भाषण भी

प्रसारित किया जिसमें भारतीयों को अंग्रेजों के विरुद्ध स्वतन्त्रता-संग्राम के लिये उभारना था और इसके लिए उन्हें निरन्तर प्रयत्न करने की प्रेरणा दी थी।

इन्हीं दिनों लीबिया में भारतीय सेना का ब्रिगेड जर्मनी के विरुद्ध लड़ रहा था। यह अनदाना का क्षेत्र के नाम से प्रसिद्ध है। इटालियन और जर्मनी भारतीय सेना पर बम गिरा रहे थे। एक दिन एक जर्मन बम में से इश्तहार प्राप्त हुए। भारतीय सिपाहियों ने उस इश्तहार को पढ़ा। इश्तहार का सारांश यह था :

"मैं (सुभाष) जर्मनी आ गया। हमें स्वतन्त्रता प्राप्त करनी है। हमारा इस लड़ाई से कोई वास्ता नहीं, अतः आप लड़ाई बन्द कर दें।"

सन्देश ने भारतीय सेना में नवजागरण उत्पन्न कर दिया। भयानक युद्ध हो रहा था। भारतीय सिपाही सोच में पड़ गये कि अब क्या किया जाये। अन्त में भारतीय सेना ने लड़ाई बन्द कर दी और हथियार डाल दिये। अंग्रेजों को मुँह की खानी पड़ी।

सुभाष ने आजाद हिन्द फौज का कार्यालय ड्रेसडन में बनाया। सुभाष ने अपनी फौज को हर प्रकार की सुविधा दी। हर सिपाही को नियमित रूप से वेतन मिलता था।

भारत की स्वतन्त्रता के लिये सुभाष जर्मनी में रहते हुये सदैव कार्य करते रहते थे। अब उन्हें सहायक की आवश्यकता थी। पिछली बार जब सुभाष बाबू बीमारी के इलाज के लिए वियना आये थे तब

इनकी भेंट कुमारी एलिन (जो एक स्टेनोग्राफर थी) से हुई। सुभाष एलिन की ओर आकर्षित हो गए। अस्तु सुभाष एलिन को अपना सहयोगी बना लिया।

कुमारी एलिन दर्शन-शास्त्र की छात्रा थी। वह भी सुभाष की ओर आकर्षित हो गई। एलिन सुभाष पर छा गई। सुभाष उसकी सेवा से बहुत प्रसन्न हुये। अन्त में एलिन सुभाष की पत्नी बन ही गई।

सन् 1942 की 26 अप्रैल को बर्लिन रेडियो पर सुभाष का सन्देश गूंज उठा। शेर की यह सिंह-गर्जना मलाया और सिंगापुर में भी सुनी गई। सुभाष ने भारतवासियों को सम्बोधित करते हुए कहा, "जब तक एक भी भारतवासी जिन्दा है वह अपनी आज़ादी के लिये संघर्ष करता ही रहेगा। हमें विश्वास है कि विजय हमारी ही होगी और विदेशियों को चुन-चुन कर देश से बाहर निकाल कर ही हम चैन की साँस लेंगे। जय हिन्द !"

मलाया, सिंगापुर और मनीला में ब्रिटिश फौजें परास्त हो गईं। मार्च 1942 को रंगून जापान के अधिकार में आ गया। 13 मार्च को अण्डमान टापू पर जापान ने विजय प्राप्त की। यह प्रथम भारतीय क्षेत्र था जिस पर जापान ने विजय प्राप्त की थी।

उन्हीं दिनों भारत की क्रान्तिकारी श्री राम बिहारी बसु भी जापान में ही थे। उन्होंने 30 मार्च 1942 को आजाद हिन्द संघ की स्थापना भी की और साथ में आजाद हिन्द फौज बनाने का भी निश्चय किया गया।

आजाद हिन्द फौज में सभी लोग प्रविष्ट हो गए। महिलाएँ भी पीछे नहीं रहीं। उस समय सुभाष को आने का निमन्त्रण भी दिया गया।

1943 ई० के मध्य में नेताजी एक पनडुब्बी पर सवार हो करके जापान के लिए चल पड़े। 20 जून 1943 को वे जापान की राजधानी टोकियो पहुँच गये। जापान में पहुँचने पर सुभाष का हार्दिक स्वागत हुआ। जापानी अधिकारियों से भेंट होने के बाद उन्होंने सिंगापुर, मलाया, आदि स्थानों का दौरा किया।

सुभाष के आने से भारतीयों में एक नवचेतना आ गई। उनकी उमंगें हिलोरें मारने लगीं। सुभाष के इशारे पर तन, मन-धन सब कुछ बलिदान करने के लिए भारतवासी तैयार हो गए। सभी जगह जनता में उत्साह भर गया। यहाँ पर श्री रासबिहारी बसु ने जिस आजाद हिन्द लीग की स्थापना की थी उसकी बागडोर सुभाष ने अपने हाथों में ले ली। सुभाष ने यहाँ पर अस्थायी आजाद हिन्द फौज की भी स्थापना की। 5 जुलाई 1943 ई० को इस सरकार की घोषणा भी कर दी गई। इस आजाद हिन्द फौज ने भारत को अंग्रेजों की दासता से मुक्ति दिलाने के लिए अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी।

आजाद हिन्द सरकार की स्थापना में जापानी सरकार ने पूर्ण सहयोग दिया। अण्डमान और निकोबार टापू नेताजी को दे दिए गए। अब नेताजी आजाद हिन्द फौज के संगठन में लग गए। नेताजी

की अपील पर हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई आदि सभी भेद भाव भुला करके आजाद हिन्द फौज में सम्मिलित हो गए। सिंगापुर और उसके पास के सभी लोगों ने सुभाष को पूर्ण सहयोग दिया। पुरुष ही नहीं स्त्रियां भी अब आजाद हिन्द फौज में आ गईं। सुभाष ने स्त्रियों की अलग सेना बनाई जो रानी लक्ष्मीबाई रेजीमेण्ट के नाम से विख्यात हुई।

21 अक्तूबर 1943 ई० को इस सरकार की विधिवत घोषणा की गई। इस सरकार को जापान, जर्मनी, स्वतन्त्र बर्मा, चीन, इटली, आदि सरकारों ने मान्यता प्रदान कर दी।

सुभाष ने आजाद हिन्द फौज का नेतृत्व भी किया। सभाष को लड़ाई के तरीकों का पूर्ण ज्ञान था।

30 दिसम्बर 1943 ई० को सुभाष ने अण्डमान और निकोबार पहुँच कर वहाँ के पोर्टब्लेयर पर राष्ट्रीय झण्डा लहराया।

जनवरी 1940 में आजाद हिन्द फौज का कार्यालय बर्मा आ गया। रंगून में सुभाष का हार्दिक स्वागत हुआ।

अब आजाद हिन्द फौज काफी संगठित हो चुकी थी और उसको ट्रेनिंग भी अच्छी मिली थी। शीघ्र ही सुभाष ने योजना बना करके शत्रुओं पर आक्रमण शुरू कर दिए। लड़ाई भयंकर होती थी। भारतीय बड़ी शूर-वीरता से लड़ते थे। 18 मार्च 1944 को आजाद हिन्द फौज ने भारत पर आक्रमण

कर दिया। आजाद हिन्द फौज ने बर्मा से भारतीय सीमा में प्रवेश किया और शीघ्र ही कोहिमा को जीत लिया। सुभाष को जैसे ही इसकी सूचना मिली उसने अपने जनरल शाहनवाज को बधाई दी। मार्च 1944 को ही शाहनवाज ने पोपा पहाड़ियों को भी जीत लिया और उन पर तिरंगा झंडा लहरा दिया।

सुभाष ने भारतीय सिपाहियों का भी सम्मान किया और उन्हें तरह-तरह के पुरस्कार भी दिए।

अब बरसात आरम्भ हो गई। अतः आगे बढ़ना भी कठिन हो गया। सुभाष युद्ध के मोर्चों पर जाकर अपने सिपाहियों की हिम्मत बढ़ाते थे। सुभाष को अपने काम से तनिक भी फुर्सत नहीं मिलती थी। आजाद हिन्द फौज के पास आधुनिक हथियार नहीं थे। इधर जापानियों ने आजाद हिन्द फौज़ को सहायता देना बन्द कर दिया। अब आसाम में आज़ाद हिन्द फौज़ के पैर टिकने मुश्किल हो गए और मज़बूर होकर आजाद हिन्द फौज को पीछे हटना पड़ा। इतना ही नहीं, बल्कि उसे रंगून और माण्डले भी छोड़ देने पड़े।

आजाद हिन्द फौज का कार्यालय भी रंगून से बदलकर बैंकाक आ गया।

सुभाष को विवश होकर रंगून छोड़ना पड़ा और वे भी 24 अप्रैल 1945 को बैंकाक के लिए रवाना हो गए।

अब आजाद हिन्द फौज की दशा अत्यन्त शोचनीय हो गई। बहुत से योद्धा युद्ध-भूमि में खेत रहे। बहुत

मे सिपाही लापता हो गए ।

इन्हीं दिनों जर्मनी की हार हो गई । रूसियों, अमेरिकनों और अंग्रेजों ने बर्लिन पर अधिकार कर लिया । इटली पहले ही पराजित हो चुका था । इन्हीं दिनों अमेरिका में प्रलयंकारी एटम बम का आविष्कार हो गया ।

अणुबम का प्रयोग

5 अगस्त 1945 का दिन संसार कभी नहीं भूल सकता । इसी दिन अमेरिका ने अपना पहला एटम बम का प्रयोग जापान के याकोहामा नामक नगर पर गिराकर किया । बम का भयंकर विस्फोट हुआ । दल दहला देने वाली आवाज तथा चकाचौंध पैदा हुई । आकाश पर बादल-ही-बादल छा गए । सैकड़ों मीलों तक इसकी विनाशकारी लीला देखने में आई । सब कुछ जल कर राख हो गया । पत्थर तक पिघल गए कुछ मीलों तक कोई भी प्राणी जीवित नहीं रहा । सारी दुनिया में हाहाकार मच गया । जापान के योद्धा भी दाँतों तले उँगली दबाने लगे । पूरा जापान घबरा उठा । ऐसी भयंकर थी इसकी विनाशकारी लीला ।

अमेरिकनों को इतने पर भी संतोष नहीं आया । 8 अगस्त को दूसरा अणुबम उन्होंने नागासाकी पर भी गिराया । इस बम का परिणाम भी वही हुआ जो पहले बम का हुआ था । इन दोनों बमों ने जापान की हिम्मत तोड़ दी । जापानी और अधिक घबरा गए

अब जापान के सामने कोई और रास्ता नहीं था। अन्त में विवश हो करके जापान ने 8 अगस्त 1945 को घुटने टेक दिए। जापान के आत्मसमर्पण का समाचार संसार के कोने-कोने में सुना गया।

सुभाष का जापान को प्रस्थान

सुभाष ने भी इस समाचार को सुना। पहले तो सुभाष को विश्वास नहीं हुआ परन्तु उन्हें जब विश्वस्त सूत्रों से ज्ञात हुआ तो वे हैरान हो गए। सुभाष को जापान की हार का बहुत दुःख हुआ। आजाद हिन्द फौज का भविष्य उन्हें और भी विकट दिखाई दिया।

अब सुभाष अपने भविष्य के बारे में सोचने लगे कि उन्हें अब क्या करना चाहिए। अपने सहयोगियों से उन्होंने मंत्रणा की और अन्त में जापान जाना ही निश्चित हुआ।

ऐसे समय में जापान जाना खतरे से खाली नहीं था। चारों ओर दुश्मन के वायुयान इनकी तलाश में हवा में मँडराते हुए घूम रहे थे। परन्तु सुभाष को इन खतरों की तनिक भी चिन्ता नहीं थी। सुभाष बाबू ने मुश्किलों का सामना बड़ी बहादुरी से किया था और उन्होंने इस खतरे का सामना भी वीरों की तरह ही किया।

सुभाष ने अपने कार्यक्रम में तनिक भी परिवर्तन नहीं किया और जापान जाने का दृढ़ निश्चय करके वे एक दिन कर्नल हबीबुर्रहमान के साथ एक वायुयान

द्वारा टोकियो के लिए रवाना हो गए।

सुभाष की वायुयान-दुर्घटना द्वारा मृत्यु

वायुयान अपनी गति से उड़ रहा था परन्तु सुभाष की गति उससे भी तेज़ थी। सुभाष ने कुछ क्षणों में ही अपने पिछले जीवन पर एक दृष्टि डाली और उनके सामने बीती हुई घटनाएँ एक-एक करके सामने आने लगीं।

अचानक वायुयान का एक इंजन खराब हो गया और अगले ही क्षण हवाई जहाज़ दुर्घटनाग्रस्त हो गया। कहते हैं कि सुभाष का इसी विमान-दुर्घटना में अन्त हो गया। कर्नल हबीबुर्रहमान बच गए। इन्होंने ही इस दुर्घटना का समाचार संसार को दिया।

सुभाष के प्रशंसकों को जब यह समाचार मिला तो उन्हें इस पर विश्वास नहीं हुआ कि सुभाष अब अमर हो गया। वे उससे दोबरा नहीं मिल सकेंगे। उनका विश्वास है कि सुभाष नहीं मरा। वह अब भी जिन्दा है और उचित समय पर प्रकट होंगे। इस सुभाष को क्या देश भूल सकता है? कभी नहीं। उन्होंने जो अपने देश के लिए बलिदान किया वह अमिट है।

सुभाष मर कर भी अमर हो गया। आज भी देश के असंख्य नवयुवक और नवयुवतियाँ सुभाष के जीवन से प्रेरणा ग्रहण करते हैं और त्याग और साहस का जीवन अपनाते हैं। जय हिन्द!

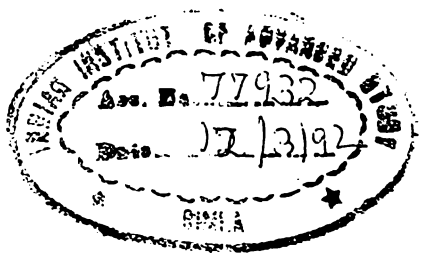
INDIAN INSTITUTE OF ADVANCED STUDY
Acc. No. 77932
Date 12/3/92
SIMLA

Library
IIAS, Shimla
H 028.5 Su 77 S
00077932